ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 25 जनवरी 2026 | **आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र** | सप्ताह रविवार, 25 जनवरी 2026 से 31 जनवरी 2026

माघ शु. 07 ● वि० सं०-2082 ● वर्ष 67, अंक 04, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 201 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रु. ● वार्षिक शु. 300/- रु.

डी.ए.वी. दुर्गापुर की स्वर्ण जयंती पर 201 कुण्डीय यज्ञ एवं महात्मा आनंद स्वामी ब्लॉक का शिलान्यास

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, दुर्गापुर की स्वर्ण जयंती पर दो दिवसीय कार्यक्रम का आयोजन किया गया। आयोजन का प्रथम चरण एनआईटी दुर्गापुर में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता डीएवी कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति, नई दिल्ली के अध्यक्ष श्री डॉ. पूनम सूरी ने की।

गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ दीप प्रज्वलित किया गया और डी.ए.वी. गान किया गया।

डॉ. पूनम सूरी ने पश्चिमी बंगाल के लगभग पंद्रह सौ डी.ए.वी. अध्यापिका–अध्यापकों को संबोधित करते हुए कहा कि नैतिकता के बगैर मानवता की रक्षा संभव नहीं है। आज लोग नैतिकता को भूलते जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि महर्षि पुनर्वसु द्वारा पाँच हज़ार वर्ष पहले की गई भविष्यवाणी–*"मनुष्य भ्रष्ट हो गया है, अतः महानाश होने वाला है"*–आज सच हो रही है। आज देशभक्ति और प्रभुभक्ति की भावना कम हो रही है। उन्होंने चरित्र–निर्माण के महत्व को रेखांकित करते हुए सत्य के पाँच प्रकार–'सत्य आहार, सत्य विचार, सत्य व्यवहार, सत्य व्यापार और सत्य आधार' बताए। शरीर के लिए हितकारी, मितभुक् भूख के अनुसार

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

डी.ए.वी. पुष्पांजलि में मकरसंक्रांति पर हुआ यज्ञ

मकरसंक्रांति के पावन पर्व के अवसर पर डी.ए.वी. पुष्पांजलि में विद्यालय के सभागार में एक विशेष हवन का आयोजन किया गया। प्रधानाचार्या श्रीमती रश्मिराज बिश्वाल जी के सान्निध्य में कक्षा पाँचवीं और छठी के विद्यार्थियों ने हवन में पूर्ण निष्ठा से आहुति अर्पित की।

प्रधानाचार्या महोदय ने अपने उद्बोधन में कहा कि मकरसंक्रांति का पर्व भारतीय संस्कृति में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, क्योंकि इस दिन सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण की ओर अग्रसर होते हैं। यह दिन हमारे जीवन में सकारात्मक परिवर्तन का प्रतीक है। जैसे सूर्य का तेज शीतकाल में भी कंटीली ठंड को समाप्त कर उष्णता और रोशनी का संचार करता है, वैसे ही हमें भी अपने जीवन में अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर और आलस्य से परिश्रम की ओर बढ़ना चाहिए।

इस अवसर सबने जीवन के सही मार्ग को अपनाने और अपनी नकारात्मकताओं को दूर करने का संकल्प लिया। शान्ति पाठ और प्रसाद वितरण के बाद कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. कोटा में अभिभावकों संग हुआ मन-संवाद

डी.ए.वी. कोटा में कक्षा 3 से 5वीं के अभिभावकों संग एक कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसको नाम दिया गया–मन संवाद। प्राचार्या श्रीमती पल्लवी अरोड़ा ने कार्यक्रम के स्वरूप के विषय में बताते हुए कहा कि–यह कार्यक्रम आज की परिस्थितियों के अनुसार बहुत ही आवश्यक है। शिक्षा कार्य को कैसे छात्रोपयोगी बनाया जाए, इस पर चर्चा हुई। अभिभावकों के साथ प्रश्नोत्तर सत्र आयोजित भी किया गया। प्राचार्या ने कहा कि अभिभावकों एवं विद्यालय का सम्मिलित प्रयास यह होना चाहिए कि बच्चा सदा मानसिक तथा शारीरिक रूप से सशक्त एवं स्वस्थ बनें।

श्री पीयूष उपाध्याय ने चेताया कि अभिभावक बच्चों को स्वयं के स्तर तक लाने का प्रयास न करें। हमें उनके स्तर तक जाने का प्रयास करना चाहिए। बच्चों के सामने या उनसे कोई नकारात्मक संवाद नहीं करना चाहिए।

एक अभिभावक ने अपने वक्तव्य में कहा कि–डी.ए.वी. विद्यालय ही देश का एकमात्र संस्थान है जहां छात्रों में नैतिक गुणों के साथ–साथ वेदों की शिक्षा भी प्रदान की जाती है।

शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है। स. प्र. समु. १

{संपादक – पूनम सूरी}

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 25 जनवरी 2026 से 31 जनवरी 2026

सर्वाङ्ग-सुन्दर बनें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

सं वर्चसा पयसा सं तनूभिः, अगन्महि मनसा सं शिवेन।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायो, अनु मार्ष्टु तन्वो यद् विलिष्टम्।।

यजु. २.२४

ऋषिः **वामदेवः**। देवता **त्वष्टा**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● [हम] (**वर्चसा**) ब्रह्मवर्चस से [और], (**पयसा**) दूध से, माधुर्य से, (**सम् अगन्महि**) संयुक्त हों, (**तनूभिः**) शरीरों से, (**सम्**) संयुक्त हों, (**शिवेन मनसा**) शिव मन से, (**सम्**) संयुक्त हों।, (**सुदत्रः**) शुभ दानी, (**त्वष्टा**) जगद्–रचयिता परमेश्वर, (**रायः**) [धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि] ऐश्वर्यों को, (**वि–दधातु**) प्रदान करे, [और], (**यत्**) जो, (**तन्वः**) शरीर का, (**विलिष्टं**) त्रुटिपूर्ण अंग है, उसे, (**अनु मार्ष्टु**) परिमार्जित करे।

● हम चाहते हैं कि हम संसार में सर्वांग–सुन्दर बनकर रहें, षोडशकल चन्द्र के समान परिपूर्ण बनकर निवास करें। हमारे अन्दर ब्रह्मवर्चस हो, आत्मिक तेज हो, जिसके सम्बन्ध में कभी ऋषि विश्वामित्र ने कहा था कि ब्रह्म–तेज ही सच्चा बल है, अन्य बल उसके सम्मुख निःसार है। वह ब्रह्म–तेज का ही बल है, जिसके द्वारा शरीर से दुर्बल होते हुए भी अनेक मानव कोटि–कोटि जनों को अपने चरणों में झुकाते रहे हैं। साथ ही हमें 'पयः' भी प्राप्त हो। 'पयस्' शब्द दूध का वाचक होता हुआ भी रस, माधुर्य, शान्ति, निर्मलता, निश्छलता, सात्त्विकता आदि का भी द्योतक है। हमें पीने के लिए गो–रस और हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हमारे अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय रूपवाले पंच शरीरों का समुचित विकास हो। हमारा मन भी शिव हो, क्योंकि जब तक मन अशिवसंकल्पों से युक्त रहेगा, तब तक हमें किसी भी क्षेत्र में उत्कर्ष प्राप्त होना सम्भव नहीं है। मन को साधकर ही मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है, और मन की जीत पर ही उसकी जीत निर्भर है, मन के हारने पर उसका हारना अवश्यम्भावी है।

'त्वष्टा' परमेश्वर सारे जगत् का तरखान है, शिल्पी है, जिसका हस्त–कौशल सम्पूर्ण विश्व में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है। वह **'सुदत्र'** है, निरंतर सबको शुभ वस्तुओं का दान करता रहता है। वह हमें भी शुभ ऐश्वर्यों का–धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि का दान करे। वह हमें भौतिक एवं आध्यात्मिक समस्त शुभ सम्पत्तियों का अधीश्वर बनादे। हमारे शरीर का कोई अंग यदि सदोष या त्रुटिपूर्ण हो गया है, तो वह कुशल शिल्पी उसे परिमार्जित, सुसंस्कृत एवं परिशुद्ध कर दे। यदि हमारे नेत्रों की दृष्टि–शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि–शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि–शक्ति तीव्र होते हुए भी हम उसका उपयोग अभय दृश्यों को देखने में करते हैं, तो त्वष्टा प्रभु हमारी मन्द या अपवित्र नेत्र–शक्ति को शुद्ध कर दें। इसी प्रकार श्रोत्र, मुख, नासिका आदि अन्य अंगों को भी मांजकर तीव्र–शक्तिमय एवं पवित्र कर दे। हे कलाकार त्वष्टा प्रभु! तुम हमारी तूलिका से रंग भरकर हमें सर्वांग–सुन्दर, सर्व–गुण–सम्पन्न और सर्व–शक्ति–समन्वित कर दो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु–भक्ति

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पाठक वृन्द ! गत अंक में हमने 'प्रभुभक्ति' पुस्तक की प्रस्तावना जो कि महात्मा नारायण स्वामी जी ने लिखी थी, प्रस्तुत की। स्वामी जी ने बताया कि आत्मिक शक्ति के पाँच साधन प्रमुख हैं। आत्मा के प्रतिकूल कुछ भी नहीं करना, सभी कर्म आत्मा के अनुकूल सोच विचार कर करने चाहिए। आत्म निरीक्षण अर्थात् मैं क्या, क्यों और कैसे कर रहा हूँ ? मेरे सभी कर्म संसार व प्राणिमात्र के कल्याण हेतु होने चाहिएँ। मनुष्य को तपस्वी होना चाहिए। मानव के सम्मुख हर सुख के बाद दुःख और हर दुःख के बाद सुख अवश्य आता है। मनुष्य तप से अपनी आत्मा को बलवती बना सकता है। उत्तम ग्रन्थों का पढ़ना और आत्म निरीक्षण करना भी आत्मा को बलवान बनाता है। सेवा भाव से हृदय विशाल होता है और निरभिमानता से आत्मा विशाल बनता है।

उन्होंने बताया कि लाला खुशहालचन्द जी (महात्मा आनन्द स्वामी) सपरिवार विशुद्ध आर्य जीवन यापन करते थे। इस पुस्तक में भक्ति विधि, मन निग्रह के साधन, संकल्प, संस्कार आदि पर प्रकाश डाला गया है। पूरा विश्वास है कि पाठक गण इससे लाभ उठाकर अपना जीवन सार्थक करेंगे.....।

.... अब आगे

निवेदन

जीवन के उस आरम्भिक काल में जबकि साधारण बालक रात की काली चादर ओढ़कर माँ की मीठी थपकियों में सो जाना पसन्द करते हैं, मैं उन नीरव–निस्तब्ध रातों में, जब सब लोग सो जाते थे, गायत्री माँ की लोरियाँ सुना करता था। बच्चों के लिए खेल–कूद भी बहुत आकर्षण रखते हैं, परन्तु मेरे लिए तो यही आकर्षण सबसे बढ़कर रहा कि मैं गायत्री माँ की मृदुल गोद में खेला करूँ।

मैं खिन्न रहता था–संसार से निराश ! आठ–नौ वर्ष की अल्पायु में ही मैंने अनुभव किया कि मेरा जीना निरर्थक है। संसार की कोई सूनी छोर खोजकर मैं रोया करता और अपनी मूक भाषा में अपने गाँव से परे दीखती उन काली पहाड़ियों से पूछता–मेरे से कोई भी क्यों प्रसन्न नहीं है ? अध्यापक, मित्र, सगे–सम्बन्धी और दूसरे वयों मेरे साथ प्रेम–व्यवहार नहीं करते ? वे पहाड़ियाँ निर्जीव थीं, निश्चल और निष्प्राण। वे मेरे प्रश्न का उत्तर न दे सकती थीं, न देतीं परन्तु एक दिन मेरी सजल आँखों को देखकर, मेरे मुर्झाये चेहरे को देखकर स्वर्गीय स्वामी नित्यानन्द जी ने, जो उन दिनों हमारे गाँव 'जलालपुर जट्टाँ' में पधारे थे, मुझसे इसका कारण पूछा।

मैंने कहा–"मेरा जीना निरर्थक है। मुझसे कोई भी प्रसन्न नहीं। किसी भी विषय में मेरा प्रवेश नहीं। ऐसे जीने का लाभ ?"

स्वामी जी ने मेरे टूटे दिल को ढाढ़स बँधाया। मुझे आश्वासन देते हुए बोले–"निराश न हो। हम तुम्हें एक उपाय बताते हैं। उसका सेवन करो। तुम्हारे संतप्त हृदय को शान्ति मिलेगी, सब शोक और विघ्न–बाधाएँ दूर हो जायेंगे।"

मैंने बालू के कणों में पानी की मिठास का अनुभव किया। इस अन्धकारमय संसार में उज्ज्वल ज्योति का मधुर आभास पाया। मैंने तिनके का सहारा लेते हुए कहा–"बताइये, आपकी अनुकम्पा !" और जब उनकी आज्ञानुसार मैं कागज़ का एक पन्ना ले आया तो स्वामी जी ने उस पर गायत्री मन्त्र लिख दिया। गायत्री मन्त्र मुझे पहले ही कण्ठस्थ था, किन्तु उस दिन उसे देखकर मेरी आँखें एक अद्भुत ज्योति से चमक उठीं।

तब उन्होंने मुझे इसके अर्थ बतलाते हुए कहा–"जब घर के सब लोग सो जाएँ, तब उठकर इस मन्त्र का जाप किया करो।"

इस घटना को आज लगभग 44 वर्ष हो चुके हैं, किन्तु मुझे एक ऐसा दिन स्मरण नहीं, जबकि मैं गायत्री माँ की पवित्र गोद में न बैठा हूँ। इस जाप से मेरे निराश हृदय को आशा मिली, मेरे खिन्न चित्त को रस मिला और मुझ अशान्त को शान्ति का महासागर ! ज्यों–ज्यों मैं इस मन्त्र का जाप करता गया, मेरी रुचि प्रभु भक्ति की ओर

उत्तरोत्तर बढ़ती गई। प्रत्येक मन्त्र मेरे ऊपर अपना नया रंग छोड़ता गया और धीरे–धीरे मैं उसमें इतना रंग गया कि मुझे संसार की किसी दूसरी वस्तु में उससे अधिक आकर्षण नहीं दीख पड़ा।

भगवान् की अपार कृपा से मेरा जन्म ऐसे माता–पिता के घर में हुआ, जो सच्चा आर्य–जीवन व्यतीत करनेवाले प्रभु भक्त हैं। उनके शिक्षण और पोषण ने मेरे अन्दर प्रभु–भक्ति का भाव कूट–कूटकर भर दिया। इस पर भी जो कृपा हुई, तो मुझे इस संसार यात्रा में जीवन– सङ्गिनी भी प्रभु भक्ति के रङ्ग में रंगी हुई एक देवी ही मिली। विवाह के पश्चात् मेरे भक्ति–भाव को इस देवी ने और भी तीव्र कर दिया। सहधर्मिणी के बाद सन्तान भी प्रभु भक्त ही मिली। मैं तो चारों ओर से प्रभु भक्ति और प्रभु–विश्वास से ओत–प्रोत हो गया और जब 1907 में श्री पूज्य महात्मा हंसराज जी के साथ संसर्ग हुआ तो प्रभु–प्रेम पर एक और अनोखा रंग चढ़ गया। इसके पश्चात् मुझे जो सम्बन्धी मिले, जो धर्मपुत्र और धर्मपुत्री भी मिले, ये भी प्रभु के सच्चे भक्त। इसी प्रकार मुझे मित्र भी वही मिले जो प्रभु–भक्ति के रंग में रंगे हुए थे।

ऐसा अनुकूल वातावरण पाकर प्रभुभक्ति का रंग दिन–प्रतिदिन गूढ़ ही होता चला गया। जीवन में समय–समय पर परिवार, सम्बन्धियों तथा मित्रों की ओर से पूर्ण सुभीता होने से मुझे इस मार्ग पर अग्रसर होने में बड़ी सहायता मिली और जब मेरे भाग्योदय की घड़ी निकट आ पहुँची तो फिर गुरु भी अचानक ही मिल गये। उन्होंने स्वयं मेरा हाथ थाम, मुझे भगवान् के सम्मुख बिठाकर उसकी झलक दिखा दी। जब कभी भी मैं एकाकी होकर अपने जीवन की अद्भुत घटनाओं पर विचार करता हूँ तो मुझे इन सबके भीतर मेरी प्रिय माता 'वेद–माता' का ही हाथ निहित नज़र आता है। मैं कुछ भी नहीं हूँ सिवाय इसके कि गायत्री माँ की कृपा का पात्र हूँ। मैंने जो कुछ भी पाया है, उसी के आशीर्वाद से पाया है।

यह कथा वर्णन करने का अभिप्राय यही है कि वे बालक–बालिकायें, युवक–युवतियाँ तथा वृद्ध–वृद्धायें, और जो मेरी तरह आतुर और आकुल हो रहे हों, मेरे जीवन की इस सत्य रामकहानी से कोई लाभ उठा सकें। वे ठोकरें खाने की बजाय एक निश्चित और सफल मार्ग की ओर अग्रसर हों।

हैदराबाद के धार्मिक संग्राम के सम्बन्ध में डेढ़ वर्ष के लिए कारागार में आकर मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि इस जेलयात्रा का 'प्रसाद' अपने भाई–बहनों को क्या दूँ ? सौभाग्य से जिस जेल (गुलबर्गा जेल) में मैं बन्दी था, उसी जेल में श्री पूज्य महात्मा नारायण– स्वामी जी महाराज भी बन्दी थे। उनके सत्सङ्ग में रहते हुए और प्रतिदिन उपनिषदों के रहस्य सुनते हुए मेरी अन्तरात्मा से यही ध्वनि प्रतिध्वनित हुई कि 'प्रभु–भक्ति' का ही प्रसाद उपयुक्त होगा। लेकिन मैं प्रसाद देनेवाला कौन ? मेरे पास रक्खा ही क्या है ? यह तो उसी की कृपा का प्रसाद है उसी की आज्ञा से आपके सम्मुख रख रहा हूँ। अच्छा लगे–न लगे, भाये–न भाये, यह प्रेम की भेंट है, स्वीकार कीजिये!

रामकहानी

लगभग 333 वर्ष पूर्व इतिहास की एक करुणाजनक घटना क्या फिर घटेगी ? क्या एक बार फिर प्रभुभक्त सन्त तुकाराम की भाँति मुझे भी अनशन करना होगा ? – यह प्रश्न तब मेरे सामने उपस्थित हुआ, जब गुलबर्गा सेंट्रल जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट ने मेरी पुस्तक वापस देने में आनाकानी की। वह घटना इस प्रकार है–यह पुस्तक तैयार हो चुकी थी। जेल में ही श्री पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी ने प्रस्तावना भी लिख दी। एक दिन जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब आये और कहने लगे–"आपने जो पुस्तक लिखी है, वह मुझे दें ताकि देख लूँ कि उसमें क्या लिखा है। दूसरे, जेल में पुस्तक लिखने की आज्ञा नहीं है।" मैंने कहा–"जब पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, तब आपको मैंने बता दिया था और उसके बाद कई बार मैंने आपको बताया कि पुस्तक लिखा जा रहा है। यदि आज्ञा न थी तो उस समय मुझे क्यों नहीं रोक दिया गया ? दूसरे, जेलों में पुस्तक लिखे ही जाते रहे हैं। लोकमान्य तिलक ने 'गीता–रहस्य' जेल ही में तो लिखा था ! श्री लाला लाजपतराय ने भी 'भारत का इतिहास' धर्मशाला जेल में लिखा था और पण्डित जवाहरलाल जी ने भी विश्व–इतिहास के सम्बन्ध में एक बड़ा पुस्तक नैनी जेल ही में तो लिखा ! परन्तु रियासत हैदराबाद के रंग अनोखे हैं।" लेकिन वह 'प्रभु–भक्ति' यह कहकर ले गये कि देखें, उसमें क्या लिखा है। मैंने कहा–"केवल ईश्वर की भक्ति के सम्बन्ध में लिखा है।" उन्होंने यह भी कहा कि वह उसे अपने ही पास सुरक्षित रखेंगे।

पूर्वोक्त बात को पाँच सप्ताह हो चुके थे। छठा सप्ताह भी जा रहा था और पुस्तक मुझे वापस नहीं मिली। तब मैंने एक दिन सुपरिण्टेण्डेण्ट से कहा कि 'प्रभु–भक्ति' की पाण्डुलिपि मुझे वापस मिलनी चाहिए परन्तु इसका उत्तर यह मिला कि पुस्तक हैदराबाद के बड़े दफ्तर में भेज दी गई है। मैंने कहा–"आपने तो अपने ही पास रखने का वचन देकर वह पुस्तक ली थी ?" तभी वह हाकिमाना लहजे में बोले–"आपने पुस्तक लिखी ही क्यों ? इसकी आज्ञा न थी; अब आपसे कलम भी ले ली जायेगी।" यह सुनकर और यह विचारकर कि मेरी पुस्तक 'तलफ़' कर दी जाएगी, उसी समय मेरी आँखों के सामने आज से लगभग 333 वर्ष पहले का एक दृश्य उपस्थित हो गया।

यही दक्षिण देश था। यहीं भगवान् के एक प्यारे सन्त तुकाराम रहते थे। उन्होंने भगवान् की भक्ति की तरङ्ग में कितने ही भजन लिख डाले। उन्हें 'प्रभङ्ग' का नाम दिया जाता है। उन भजनों ने सारे महाराष्ट्र में धूम मचाई। भक्त लोग झूम–झूमकर गाते और नाचते परन्तु एक 'आँख' को प्रभु–प्रेमियों का यह संगीत नहीं भाया। उसने एक नीचतापूर्ण चाल चलकर संत तुकाराम के भजनों की सारी पुस्तकें उससे ले लीं और कह दिया कि पुस्तकें इन्द्रायणी नदी में फिंकवा दी गई हैं। सन्त तुकाराम के हृदय पर इससे गहरी चोट लगी, उनका दिल टूट गया, वह इन्द्रायणी नदी के तट पर एक मन्दिर के सामने बैठ गये और प्रतिज्ञा कर ली–'जब तक मेरी सारी पुस्तकें मुझे नहीं मिलेंगी, मैं अन्न–जल ग्रहण नहीं करुँगा।' प्रभु के प्यारे ने अनशन आरम्भ कर दिया। एक–एक करके बारह दिन बीत गये। अन्त में तेरहवें दिन जब उनकी अवस्था बहुत बिगड़ने लगी तो उनकी पुस्तकें उन्हें वापस दे दी गईं।

यह दृश्य मेरी आँखों के सामने विद्युत् के समान आया और चला गया। मैंने जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब से कहा–"आपने अपना वचन भंग किया है, आपने पुस्तक केवल अपने पास रखने और देखने के लिए ली थी। उसे हैदराबाद भेजकर आपने उचित नहीं किया और मेरी कलम ले लेने की जो बात कही है, उसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं। मैं आज ही से सब सुभीतों पर लात मारता हूँ और एक साधारण कैदी की तरह रहना शुरु करता हूँ और आपसे यह कहे देता हूँ कि आज तेरह् जुलाई है, यदि मेरी पुस्तक 16 जुलाई तक न दी गई तो मैं बीस जुलाई से अनशन–व्रत करके अपने प्राण त्याग दूँगा। मैं ऐसे लोगों के रहम पर जीना पसन्द नहीं करता, जो अपना वचन भंग करते हैं और प्रभु–भक्ति की पुस्तक को भी ज़ब्त कर लेते हैं।" यह कहकर मैंने अपने वस्त्र तत्काल उतार डाले और जेल के भगवे वस्त्र पहन लिये। सोने के लिए भूमि पर ही टाट बिछा लिया और भगवान् से प्रार्थना करने लगा।

मेरे साथ सहानुभूति रखते हुए सत्याग्रही लाला मुरलीलाल जी रिटायर्ड सैशन जज पंजाब और महाशय ठाकुरदास जी वानप्रस्थी हलदौर–निवासी ने भी ऐसा ही किया। पूर्ण अनशन बीस जुलाई से करना था, लेकिन मैंने उसकी तैयारी चौदह तारीख से आरम्भ कर दी। मैं ज्वार की रोटी के केवल पाँच ग्रास 24 घण्टों में खाता। पाँचों प्राणों को सन्तुष्ट करने के लिए 'ओम् प्राणाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा' कह पेट के हवनकुण्ड में पाँच आहुतियाँ डाल देता। एक, दो, तीन, चार, पाँच दिन इसी प्रकार बीत गए। मैंने तैयारी के उन दिनों में देख लिया कि जेल–निवास से, जेल के रद्दी भोजन और प्रतिकूल जलवायु से जो नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं, उनसे जो निर्बलता हो गई है, उसे सम्मुख रखकर अनशन प्रारम्भ करने के पश्चात् दस या पन्द्रह दिन तो मैं जीवित रह ही सकूँगा। छठा दिन भी आ पहुँचा। हवन–यज्ञ के पश्चात् मैंने अपने सत्याग्रही कैदियों से निवेदन किया कि वे मुझे अकेले ही अनशन करने दें। यदि वे भी अनशन करेंगे तो मुझे बहुत कष्ट होगा। उस दिन भी अपने पेट को खाली रक्खा। इस प्रकार से ये दिन अनशन में ही गुज़रे। परन्तु सुपरिण्टेण्डेण्ट को यह पता था कि भूख–हड़ताल बीस तारीख को आरम्भ होगी। उन्नीस जुलाई सायंकाल के समय जबकि मैं अपनी कोठरी में बैठा प्रभु का भजन कर रहा था तो महात्मा नारायण स्वामी जी ने मुझे बाहर बुलाया। सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब भी पास ही बैठे थे। मेरी पुस्तक की पाण्डुलिपि उनके हाथ में थी। मैं करीब गया तो उन्होंने वह मुझे लौटा दी। इसी प्रकार लगभग 333 वर्ष के पश्चात् दक्षिण देश में एक बार फिर तुकाराम की बात स्मरण हो गई।

मैंने जेल में तीन बार भूख–हड़ताल की और प्रभु कृपा से तीनों बार मुझे सफलता प्राप्त हुई। बाकी दो का सम्बन्ध 'प्रभु–भक्ति' से नहीं था, सत्याग्रहियों के कष्टों का निवारण करने और उनसे जेलवालों के अमानुषिक व्यवहार का विरोध करने से था। अतएव उनका वर्णन नहीं करता।

सेण्ट्रल जेल गुलबर्गा **भक्तों का दासानुदास**
20 जुलाई, 1939 **खुशहालचन्द**

क्रमशः

प्रखर राष्ट्रवादी ऋषि दयानन्द की राजनैतिक अवधारणा

● जगदीश आर्य

महर्षि दयानन्द के जीवन का एक प्रसंग है कि आपको अजमेर के मेयो कॉलेज में राजकुमारों के समक्ष राजनीति पर भाषण देने के लिये आमन्त्रित किया गया। आपने राजनीति की विशद् व्याख्या प्रस्तुत की। दयानन्द के व्याख्यान से प्रभावित होकर कालेज के प्रिंसपल ने, जो स्वयं एक यूरोपियन था, ऋषि दयानन्द के राजनीतिक ज्ञान की भूरि–भूरि प्रशंसा की। उसे आश्चर्य हुआ कि संस्कृत साहित्य में भी इतनी ऊँची राजनीति है।

स्वामीजी आंग्ल भाषा का ए, बी, सी, डी भी नहीं जानते थे। इधर राजनीतिक सिद्धान्त, जो बड़ी–बड़ी पोथियों में हैं, वे सब अंग्रेज़ी भाषा में हैं। उन पोथियों में भारतीय राजनैतिक चिंतकों का नाम भी नहीं है, जब कि राजनीतिक विचारकों की दृष्टि से, 'स्वयंभुव' 'प्राचेतस' 'शुक' 'नारद' 'भीष्म' 'कृष्ण' 'विदुर' एवं 'कौटिल्य' आदि की एक लम्बी श्रृंखला है। मेकॉले की शिक्षा–पद्धति से शिक्षित भारतीय राजनेता अपने राजनीतिक चिंतन का स्रोत केवल पाश्चात्य दार्शनिकों को ही मानते हैं। 'अरस्तु,' 'हाब्स,' 'लॉक,' 'मार्क्स,' 'प्लेटो,' 'रूसो,' 'मील' आदि ही उनके प्रेरणास्रोत हैं। महात्मा गांधी जैसे भारतीय राजनेता का भी चिन्तनस्रोत 'टालस्टाय' और 'रस्किन' जैसे पाश्चात्य दार्शनिक रहे हैं।

ऋषि दयानन्द ही वे महामानव हैं, जिन्होंने अपना सारा चिन्तन–उत्स वेद एवं ऋषि ग्रन्थों से ही प्राप्त किया है।

ऋषि दयानन्द के राज्य सम्बन्धी कतिपय क्रांतिकारी विचारबिन्दुओं को इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है–

1. राज्य की उत्पत्ति एवं राज्य विषयक परिकल्पना

मनुष्य जब उत्पन्न हुआ, अर्थात् सृष्टि की आदिम अवस्था में, सभी मनुष्य आर्यत्व (सदाचार) से परिपूर्ण थे। कुछ काल बाद आर्य–अनार्य (दस्यु) दो भेद हुए। स्वामी दयानन्दजी अपने एक प्रवचन में इस विषय पर कहते हैं–

"मनुष्य सृष्टि उत्पन्न होने पर कुछ काल बाद आर्य और दस्यु दो भेद हुए–(वेदों का प्रमाण देकर कहते हैं कि) '**विजानी ह्यार्यान ये च दस्यवो।**' (ऋ. 1.51.8) शनैः शनैः चार वर्णों की उत्पत्ति हुई।" (संदर्भ–ग्रन्थ, 'पूना प्रवचन', आठवाँ–प्रवचन)।

इससे यह ज्ञात होता है कि आदिम अवस्था में कोई राज्य व्यवस्था नहीं थी, कोई सामाजिक प्रतिबन्ध नहीं था। जनता सदाचार से परिपूर्ण थी। सभी स्वतन्त्र जीवन–यापन करते थे। सम्पत्ति पर सबका समान अधिकार था। कोई छीना–झपटी नहीं थी। इस प्रकार स्वयंभुव मनु तक कोई राज्यव्यवस्था नहीं थी। कुछ काल बाद कुछ मनुष्यों के अन्दर आलस्य प्रमाद घर करने लगा, फलतः सम्पत्ति–संग्रह की भावना उत्पन्न हुई। यहीं से छीना–झपटी का प्रारम्भ होता है। अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गई। ऐसी स्थिति में सभी प्रजाओं ने मिलकर 'इक्ष्वाकु' को अपना राजा निर्वाचित किया। दयानन्दजी इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि

"इक्ष्वाकु राजा हुआ तो वह इससे नहीं कि वह श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुआ था अथवा उसने बलात्कार से राज्य प्राप्त किया हो, किन्तु सारे लोगों ने उसे उसकी योग्यतानुसार सभा में अध्यक्ष–स्थान पर बैठाया।" (द्रष्टव्य–'पूना–प्रवचन'–नौवाँ–प्रवचन)।

इक्ष्वाकु के समय से ही समाज–व्यवस्था का व्यवस्थित रूप प्रस्थापित हुआ।

2. राज्य उत्पत्ति का दैवी सिद्धान्त और उसका विरोध

महाभारत काल तक राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि कहा गया है। भीष्म पर्व में, भीष्मपितामह कहते हैं कि "**राजा परम् दैवतमृत्युवाच।**" (भीष्म पर्व, श्लोक सं. 100) गीता भी जो महाभारत का अंश है, उसमें कहा गया है–"**नराणां च नराधिपम्।**" अर्थात् मनुष्यों में राजा मैं हूँ। इधर महान् क्रान्तिकारी ऋषि दयानन्द राजा को जनता का प्रतिनिधि स्वीकार करते हैं ईश्वर का नहीं। उन्होंने तो राजा को अन्नदाता जैसे सम्बोधन का भी विरोध किया है। (द्रष्टव्य–आर. एस. पारिख की पुस्तक "Contribution of Arya Samaj in the making of Modern India"-page 230)

3. राज्य और जनता का आपसी सम्बन्ध कैसा हो

सत्यार्थप्रकाश में ऋषि लिखते हैं–

"सभापति तदद्धीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा (जनता) के आधीन और प्रजा राजसभा के आधीन रहे।" (स. प्र. छठा समु.)

इसका अर्थ हुआ कि सभाध्यक्ष, संसद और जनता एक दूसरे के आधीन रहें। स्वामीजी ने प्रजा और राजा में पिता–पुत्र सम्बन्ध स्थापित करने का निर्देश दिया है–**वर्तेत पितृवन्नृषु।** राष्ट्रपति (राजा) प्रजा को पुत्रवत् व्यवहार करे और जनता राजा को अपना पिता समझे। जिस शासन व्यवस्था में यह नीति काम करती है, वही शासन व्यवस्था सुन्दर है। आज की शासन व्यवस्था चाहे वह सोवियत रूस की हो, अमेरिका की हो या भारत की सभी जनता के शोषक हैं, पोषक नहीं, आज के शासक वर्ग को सत्ता के अधिकार का मोह है–जनता का नहीं। जनता को भी ऐसे शासन से कोई प्यार नहीं है।

4. सर्वोच्च अधिकार जनता के हाथ में

वैदिक पद्धति के अनुसार राजा (सभाध्यक्ष) निर्वाचित होता है। निर्वाचन का अधिकार जन–प्रतिनिधियों को है। निर्वाचित सभाध्यक्ष अगर निरंकुश हो उठे तो जनता को यह अधिकार होना चाहिये कि उसे पदच्युत कर दे। स्वामीजी यजुर्वेद के आठवें अध्याय के तेइसवें मन्त्र के भावार्थ में लिखते हैं–

"राजा व प्रजाजन कभी अधर्म कामों को न करें जो किसी प्रकार अपराध के अनुकूल कार्य करे तो प्रजा राजा को, और राजा प्रजा को दण्ड देवे।"

पूना प्रवचन में स्वामीजी ने उदाहरण देकर यह स्पष्ट किया है कि प्राचीन काल में जनता को सभाध्यक्ष को उसके बुरे आचरण के कारण राज्याधिकार से वंचित करने का पूर्ण अधिकार था (द्रष्टव्य– 'पूना–प्रवचन', नवाँ प्रवचन)। प्रतिनिधियों को एक बार चुन लेने पर उनके राष्ट्र–विरोधी कार्यों के कारण उन्हें वापस लौटाने का अधिकार केवल 'स्वीट्जरलैण्ड' में ही है। विश्व के किसी भी राष्ट्र के संविधान में ऐसा प्रावधान नहीं है। मुझे यह देख कर यह सुखद आश्चर्य होता है कि ऋषि दयानन्द ने आज {निर्वाण–शती} से 107 वर्ष पूर्व इसका प्रावधान कर, जनता के हाथों सर्वोच्च अधिकार प्रदान करने का निर्देश दिया है। दयानन्द का राजनीतिक चिन्तन कितना क्रान्तिकारी है, इसका आप अनुमान लगा सकते हैं। स्वामीजी ने राजा को स्पष्ट निर्देश दिया है कि–

"**त्वा द्राष्टमधि भ्रंशत्**" (यजु. 12.11) अर्थात् तुझ से **(राष्ट्रम्)** राष्ट्र **(मा)** न **(भ्रंशत्)** नष्ट–भ्रष्ट न हो–न उसका अधःपतन हो–न छीना जाए"।

मन्त्र के भावार्थ में ऋषिवर राजा को सावधान करते हैं कि आप के बुरे आचरण से राज्य कभी नष्ट न होने पावे–जिससे प्रजा आपके अनुकूल वर्त्ते। (ऋ. दया. के यजुर्वेद भाष्य से)।

5. राष्ट्रपति का निर्वाचन

यजुर्वेद 8.37 में राजा (राष्ट्रपति) के लिए एक पद आया है–"**वरुणश्च राजा**" तथा मन्त्र 38 में एक और पद है "**उपयाम गृहीतः।**" स्वामी दयानन्दजी 'वरुण' का अर्थ करते हैं 'श्रेष्ठ' और 'उपयाम गृहीत्' का अर्थ करते हैं–'**राज्य व्यवहाराय स्वीकृतः**' –अर्थात् राज्य व्यवहार के लिये आप हम से स्वीकृत (निर्वाचित) हैं। 'वरुण' शब्द का अर्थ उणादिकोष में इस प्रकार है–'**वृणोति व्रियते वाऽसौ वरुणः**' (उणा. 3.13) जिसका 'वरण' किया जाए। राष्ट्रपति का मनोनयन नहीं करके निर्वाचन करने का प्रावधान है। सत्यार्थप्रकाश में स्वामीजी लिखते हैं–

"तीन सभाओं–महाविद्वानों की विद्या सभाधिकारी, धार्मिक विद्वानों की धर्म सभाधिकारी और प्रशंसनीय धार्मिक राजपुरुषों के सभासदों की सम्मति से राज्याधिकारी ग्रहण किया जाए, जिससे समन्वयात्मक रूप से प्रशासन किया जा सके।"

6. राष्ट्रपति की योग्यता एवं उसकी दिनचर्या

यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है। भारत का संविधान राष्ट्रपति के लिए निम्नलिखित योग्यतायें चाहता है। (1) भारत का नागरिक हो (2) 35 वर्ष की आयु हो (3) स्वस्थ हो। **क्रमशः**

'महर्षि दयानन्द निर्वाणशती स्मृति ग्रन्थ' से साभार

पूना प्रवचन में स्वामीजी ने उदाहरण देकर यह स्पष्ट किया है कि प्राचीन काल में जनता को सभाध्यक्ष को उसके बुरे आचरण के कारण राज्याधिकार से वंचित करने का पूर्ण अधिकार था (द्रष्टव्य- 'पूना-प्रवचन', नवाँ प्रवचन)। प्रतिनिधियों को एक बार चुन लेने पर उनके राष्ट्र-विरोधी कार्यों के कारण उन्हें वापस लौटाने का अधिकार केवल 'स्वीट्जरलैण्ड' में ही है। विश्व के किसी भी राष्ट्र के संविधान में ऐसा प्रावधान नहीं है। मुझे यह देख कर यह सुखद आश्चर्य होता है कि ऋषि दयानन्द ने आज {निर्वाण-शती} से 107 वर्ष पूर्व इसका प्रावधान कर, जनता के हाथों सर्वोच्च अधिकार प्रदान करने का निर्देश दिया है।

आत्मकथा

● लाला लाजपतराय

{ 'मेरी जलावतनी की दास्तान' से संकलित }

मुझे 16 मई 1907 को लाहौर से गिरफ्तार कर माण्डले पहुँचाया गया। पहले गाड़ी पर सवार होकर दो पुलिस आफिसरों के साथ माण्डले के किले में सुपरिटेण्डेण्ट के बंगले में पहुँचाया गया। 350 के नोट और मेरी एक घड़ी साथ के लाहौरी गोरे पुलिस इस्पेक्टर सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल को देकर उसकी और मेरी रसीद ले ली और वे दोनों अफसर चले गये। इसके बाद सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने मुझे एक साफ और अच्छे कमरे में रहने को जगह दी। वहाँ दरी, मेज, कुर्सी, निवार का एक पंलग और दो चादरें तथा जेल के दो कम्बल ओढ़ने को दिये गये। मेरे साथ सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल का वर्त्ताव सहानुभूतिपूर्ण था। मेरी जाँच पड़ताल करने के लिए सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने मुझ से वचन ले लिया था कि मैं भागूँगा नहीं। एक दिन की बात है कि मैं स्नान करने की जगह स्नान कर रहा था, पुलिस वाले मेरे रहने की जगह खाली देख कर बहुत घबराये और मेरे बोलने पर कहीं शान्ति मिली। एक दिन डिप्टी कमिश्नर तथा कमिश्नर मुझसे मिलने आये। उन्होंने पूछा कि किसी वस्तु की इच्छा तो नहीं। इस बार मैंने कुछ कपड़े माँगे जो बनवा दिये गये। खाने के लिए पहले तो मुझे अंग्रेज़ी ढंग का खाना मिलता रहा। पीछे एक मद्रासी छोकरा रसोई बनाने लगा। मुझे सिपाहियों की देखरेख में घूमने फिरने की आज्ञा थी, किन्तु मैंने संकेत से यथोचित उत्तर देकर उन्हें हट जाने को कहा, किन्तु वे बड़ी उत्सुकता से मुझे देखते रहे।

नये मकान में जाकर भी पहले की तरह सब सामान मुझे मिल गया था और मोमबत्ती की जगह लैम्प भी मिल गया था। एक बार मैंने कहा कि वायु ठीक आने के लिए मेरा बिस्तर ऊँचा कर दिया जाये परन्तु यह निवेदन स्वीकार होने योग्य नहीं समझा गया।

मैं यह कह चुका हूँ कि एक मद्रासी छोकरा मेरा खाना बनाने लगा था तथा एक भंगी, भिस्ती, नाई और धोबी भी काम करने के लिए नियुक्त किये गये थे।

पहला मास समाप्त होने पर उन लोगों ने वेतन माँगा। मैंने कहा सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल से माँगो। उन्होंने वैसा ही किया। एक दिन सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने मुझे से कहा कि इन लोगों को वेतन क्यों नहीं मिला। मैंने कहा कि रेगुलेशन नं. 3 सन् 1818 के कानून के अनुसार इन लोगों का वेतन गवर्नमेण्ट को देना चाहिए। इस पर सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल बहुत नाराज़ हुआ। उसने कहा कि मैं भी स्वयं कानून से कुछ कम नहीं हूँ। दाढ़ी मुड़ाना ज़रूरी नहीं है। न गवर्नमेंण्ट इसका खर्च देने के लिए पाबन्द है। दूसरे मैं भारतीयों के रस्मोरिवाज़ खूब जानता हूँ। मुसलमानों के लिए दाढ़ी मुंडवाना अनिवार्य हो सकता है, हिन्दुओं के लिए नहीं। दूसरे क्या आप अपने घर भी रोज नाई रखते थे ? ये सब बातें सुपरिण्टेण्डेण्ट एक बार कह गया और मैं सुनता रहा। मैंने कहा वेतन देने की कोई बात नहीं है। न मैं इन छोटी–छोटी बातों की शिकायत ही करना चाहता हूँ। नहीं हो सकता तो आप के पास जो रुपया जमा है उसमें से इन लोगों का वेतन दे दिया जाए। इस पर भी जब सन्तोष नहीं हुआ तो मेरे ही हाथ से उन लोगों को वेतन दिलाकर उसे सन्तोष हुआ।

थोड़े ही दिन बाद सुपरिण्टेण्डेण्ट का पारा उतरा तो उसने स्वयं सब लोगों का वेतन देना आरम्भ कर दिया। इसी तरह से कई मास बीत गये तो अक्टूबर में तब गर्मी पड़ने लगी और रात को ठीक नींद भी न आती थी तब मैंने दरख्वास्त की कि मेरे पास एक नौकर और रखा जाए जो ज़रुरत पड़ने पर पंखा कर सके। परन्तु इसका कुछ नहीं हुआ। हाँ, इससे सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल और भभक उठा और कहा गया कि यह एक कैदी की असाधारण दरख्वास्त है। इस पर जब वह कुछ ठण्डा हुआ तो मेरे भोजन बनाने वाले को ही वहाँ सोने के लिए आज्ञा दी गई, पर उसने उसे स्वीकार नहीं किया। तब मैंने भी सन्तोष किया और जो कुछ कष्ट होता था उसे सहन करना आरम्भ कर दिया।

एक दिन डिप्टी कमिश्नर ने आकर पूछा कि कोई किसी तरह की शिकायत तो नहीं। इस पर मैंने कहा–वायसराय को मैंने एक दरख्वास्त देकर कहा था कि मेरे लिए एक पंजाबी रसोइया चाहिए और मुझे स्वयं देश से एक नौकर बुला लेने की आज्ञा दी जाये, परन्तु वह स्वीकार नहीं हुई। मद्रासी छोकरा जो भोजन बनाता है ठीक तौर पर हज़म नहीं हो पाता। ये सब बातें सुनकर डिप्टी कमिश्नर चला गया। अगले ही दिन सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल भी आए और उनसे भी यही बातें हुई। उनका पारा कुछ उतरा हुआ था, इसलिए मेरी सब बातें कमिश्नर साहब को लिख भेजीं। इस पर रंगून से एक बूढ़ा सिक्ख भेजा गया, पर वह खाना बनाना नहीं जानता था इसलिए दो चार दिन के बाद वह भी बेचारा वापस चला गया और फिर वही मद्रासी भोजन तैयार करने लगा तथा अन्त तक वही प्रबन्ध जारी रहा।

नये मकान में जाकर भी पहले की तरह सब सामान मुझे मिल गया था और मोमबत्ती की जगह लैम्प भी मिल गया था। एक बार मैंने कहा कि वायु ठीक आने के लिए मेरा बिस्तर ऊँचा कर दिया जाये परन्तु यह निवेदन स्वीकार होने योग्य नहीं समझा गया।

मैं यह कह चुका हूँ कि एक मद्रासी छोकरा मेरा खाना बनाने लगा था तथा एक भंगी, भिस्ती, नाई और धोबी भी काम करने के लिए नियुक्त किये गये थे।

मुझ पर दो सरकारों की हुक्मत थी। जेल में सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल की और बाहर भ्रमण करने जाऊँ जो पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की। इसलिए, जब सरदार अजीतसिंह भी माण्डले लाकर नजरबन्द कर दिये गये तो वहाँ भी बाहर की सड़कों पर खूब पहरा रहने लगा और हम लोगों को कहीं बाहर–भीतर घूमने में बड़ी अड़चन पड़ी।

सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल कभी–कभी मुझ पर प्रसन्न भी हो जाता था। एक बार उसने मछलियाँ पकड़ने का काँटा भी मंगा दिया था जिससे दिन काटने में सुविधा रहे। दो चार बार मैंने मछलियाँ पकड़ने की चेष्टा की, पुलिस के कांस्टेबल भी मेरी सहायता करते थे, परन्तु कभी सफल नहीं हुई।

मैं जब से पुलिस की हिरासत में आया था, सख्त निगरानी की जाती थी। सिवा सरकारी अफ़सरों के मुझसे कोई मिलजुल न सकता था। सड़क और किले के चारों ओर कड़ा पहरा रहता था। पहरेदार भी किसी काम से यदि मेरे पास आता था तो उसकी पहले तलाशी ले ली जाती थी। इसी तरह से मेरा पत्र व्यवहार भी देखकर होता था, परन्तु कोई अखबार मेरे पास तक नहीं पहुँच पाता था। एक बार दो गोरे पुलिस सार्जण्ट अपने पढ़ने के लिए कुछ समाचार पत्र ले आये थे। जब सुपरिण्टेण्डेण्ट ने देखा तो उनको खूब फटकार बताई। वे बेचारे अखबार फेंकने को विवश किये जाने पर चुप हो गये।

मेरे साथ किसी सम्बन्धी को भी मिलने की आज्ञा नहीं थी। एक बार पंजाब के लाट साहब से मेरे मिलने के लिए मेरे भाई लाला धनपतराय ने अनुमति माँगी तो नहीं मिली।

मेरे साथ पुलिस के एक पहरेदार रहते थे। पीछे उनकी संख्या बढ़ा दी गई। उनको मेरे साथ हर समय सशस्त्र रहने की आज्ञा थी। पंजाब तथा दूसरे भारतीय पुलिस वाले मेरे काम में नहीं लगाये जाते थे। बर्मी और गोरी पुलिस ही मेरे पहरे के लिए तैयार रहती थी। दूसरे और कामों में जहाँ पंजाब के आदमी पुलिस में काम करते थे, उधर जाने से मुझे हमेशा रोका जाता था।

यद्यपि जिस सड़क पर होकर मैं घूमने–फिरने जाता था, वह एक तरह से बन्द थी, किन्तु तब भी बहुत से आदमी उधर निकल आते थे और न मालूम क्यों मुझे सलाम करने लगते थे। और कभी–कभी वे मार भी खाते थे पर यह सलाम का राग बढ़ता ही जाता था। एक बार जब मैं सड़क पर से जा रहा था, मुझे दो पंजाबी सामने से आते दीखे। मैंने चाहा कि मैं किसी तरह से पीछे हट जाऊँ परन्तु मैं ऐसा न कर सका। परिणाम यह हुआ कि उनमें से एक आदमी ने झुककर तथा एक आदमी ने जमीन पर मस्तक रखकर मुझे अभिवादन किया। बस इसी अपराध पर उनको गिरफ्तार कर लिया गया। सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस के सामने पेश होने पर एक ने तो इधर–उधर की बात कहकर अपना पिण्ड छुड़ाया, परन्तु दूसरा झूठ न बोल सका। उसने मेरी ओर संकेत करके कहा कि एक पंजाबी ठेकेदार हूँ और रंगून में रहता हूँ। यहाँ किसी काम से आया था। अकस्मात् इधर निकल आया बस यही मेरा दोष है। पर सुपरिण्टेण्डेण्ट ने कहा भविष्य में ऐसा न करना। ठेकेदार ने कहा कि साक्षात्कार होने पर मैं ऐसा

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

गतांक से आगे...

भारतीय नवजागरण और स्वामी दयानन्द सरस्वती

● डॉ. ज्वलन्तकुमार शास्त्री

9. सबके लिए वेदाधिकार– फ्रैन्च लेखक रोमां रोलाँ (Romain Rolland) ने लिखा है– "दयानन्द ने ही सर्वप्रथम वेदों के जल–स्रोत को सबके लिए खुलवाया, जिससे वे स्वयं अपनी प्यास बुझा सकें। सत्य यह है कि भारत के लिए वह दिन युग–प्रवर्त्तक था, जिस दिन एक ब्राह्मण ने न केवल यह स्वीकार किया कि वेदों का ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार मनुष्य मात्र का है, जिनका पठन–पाठन उनसे पूर्व कट्टर ब्राह्मणों ने निषिद्ध कर दिया था। अपितु इस बात पर भी बल दिया कि वेदों का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना आर्यों का परम धर्म है।" **{रोमां रोलाँ (Romain Rolland) द्वारा लिखित रामकृष्ण परमहंस की जीवनी का एक अध्याय Builders of Unity है। उसी में प्रसङ्गतः स्वामी दयानन्द के कार्यों और उनके व्यक्तित्व का वर्णन किया गया है। उसे 'ऋषि दयानन्द और आर्य समाज' भाग–2 (सम्पादक–डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री) के तृतीय अध्याय में 'एकता के निर्माता : दयानन्द' शीर्षक से पृ. 36–53 तक प्रकाशित किया गया है। यहाँ उद्धृत अंश पृ. 45–46 से लिया गया है।}** प्रो. विण्टरनित्स दयानन्द के इस महान् उपकार के प्रति कृतज्ञता के भाव को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं–"हमें वेदों के अध्ययन को प्रोत्साहन देने और यह सिद्ध करने में कि मूर्तिपूजा वेदसम्मत नहीं है, स्वामी दयानन्द के महान् उपकार को अवश्य स्वीकार करना चाहिए। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक वर्तमान जातिभेद की मूर्खता और उसकी हानियों के विरुद्ध अपने अनुयायियों को तैयार करने के अतिरिक्त यदि और कुछ भी न करते तो भी वह वर्तमान भारत के बड़े नेता के रूप में अवश्य सम्मान पा जाते।" **{इन्द्र विद्यावाचस्पति, महर्षि दयानन्द, पृ. 145 (सम्पादक–ज्वलन्त कुमार शास्त्री, प्रकाशक–आर्य प्रकाशन, दिल्ली, 2023 ई.)}**

10. सुधार नहीं क्रान्ति–"उन्नीसवीं सदी के हिन्दू–नवोत्थान के इतिहास का पृष्ठ–पृष्ठ बतलाता है कि जब यूरोपवाले भारतवर्ष में आए, तब यहाँ के धर्म और संस्कृति पर रूढ़ि की पर्तें जमी हुई थीं एवं यूरोप के मुकाबले में . उठने के लिए यह आवश्यक हो गया था कि ये पर्तें एकदम उखाड़ फेंकी जाएँ और हिन्दुत्व का वह रूप प्रकट किया जाए जो निर्मल और बुद्धिगम्य हो। स्वामीजी के मत से यह हिन्दुत्व वैदिक हिन्दुत्व ही हो सकता था। किन्तु यह हिन्दुत्व पौराणिक कल्पनाओं के नीचे दबा हुआ था। उस पर अनेक स्मृतियों की धूल जम गई थी एवं वेद के बाद के सहस्रों वर्षों में हिन्दुओं ने जो रूढ़ियाँ और अन्ध–विश्वास अर्जित किए थे उनके ढूहों के नीचे यह धर्म दबा पड़ा था। राममोहन राय, रानाडे, केशवचन्द्र और तिलक से भिन्न स्वामी दयानन्द की विशेषता यह रही कि उन्होंने धीरे–धीरे पपड़ियाँ तोड़ने का काम न करके, उन्हें एक ही चोट से साफ कर देने का निश्चय किया। परिवर्तन जब धीरे–धीरे आता है, तब सुधार कहलाता है किन्तु वहीं जब तीव्र वेग से पहुँच जाता है, तब उसे क्रान्ति कहते हैं। दयानन्द के अन्य समकालीन सुधारक केवल सुधारक मात्र थे, किन्तु दयानन्द क्रान्ति के वेग से आए और उन्होंने निश्छल भाव से यह घोषणा कर दी कि हिन्दू–धर्म–ग्रन्थों में केवल वेद ही मान्य हैं, अन्य शास्त्रों और पुराणों की बातें बुद्धि की कसौटी पर कसे बिना मानी नहीं जानी चाहिए। छह शास्त्रों (स्वामी दयानन्द न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा एवं वेदान्त इन छः दर्शन शास्त्रों को प्रामाणिक मानते थे–**ज्वलन्त शास्त्री**) और अठारह पुराणों को उन्होंने एक ही झटके में साफ कर दिया। वेदों में मूर्तिपूजा. अवतारवाद, तीर्थों और अनेक पौराणिक अनुष्ठानों का समर्थन नहीं था, अतएव स्वामीजी ने इन सारे कृत्यों और विश्वासों को गलत घोषित किया। वेद को छोड़कर कोई अन्य धर्म–ग्रन्थ प्रमाण (स्वामीजी वेदानुकूल ऋषियों के ग्रन्थों को आर्ष होने से 'परतः प्रमाण' की कोटि में मानते थे– **ज्वलन्त शास्त्री**) नहीं है, इस सत्य का प्रचार करने के लिए स्वामीजी ने सारे देश का दौरा करना आरम्भ किया और जहाँ–जहाँ वे गए, प्राचीन परम्परा के पण्डित और विद्वान् उनसे हार मानते गए। संस्कृत भाषा का उन्हें अगाध ज्ञान था। संस्कृत में वे धारावाहिक रूप से बोलते थे। साथ ही वे प्रचण्ड तार्किक थे। उन्होंने ईसाई और मुस्लिम धर्म ग्रन्थों का भी भली–भाँति मन्थन किया था। अतएव अकेले ही उन्होंने तीन–तीन मोर्चों पर संघर्ष आरम्भ कर दिया। दो मोर्चे तो ईसाइयत और इस्लाम के थे, किन्तु तीसरा मोर्चा सनातनधर्मी हिन्दुओं का था, जिनसे जूझने में स्वामीजी को अनेक अपमान, कुत्सा, कलंक और कष्ट झेलने पड़े। उनके प्रचण्ड शत्रु ईसाई और मुसलमान नहीं सनातनी हिन्दू ही निकले और कहते हैं, अन्त में इन्हीं हिन्दुओं के षड्यन्त्र से उनका प्राणान्त भी हुआ। दयानन्द ने बुद्धिवाद की जो मशाल जलाई थी, उसका कोई जवाब नहीं था। वे जो कुछ कह रहे थे, उसका उत्तर न तो मुसलमान दे सकते थे, न ईसाई, न पुराणों पर पलने वाले हिन्दू पण्डित और विद्वान्। हिन्दू नवोत्थान अब पूरे प्रकाश में आ गया था और अनेक समझदार लोग, मन–ही–मन यह अनुभव करने लगे थे कि सच ही पौराणिक धर्म में कोई सार नहीं है। **{रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ 475–476 (प्रकाशक–लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2002 ई.}**

स्वामीजी के मत से यह हिन्दुत्व वैदिक हिन्दुत्व ही हो सकता था। किन्तु यह हिन्दुत्व पौराणिक कल्पनाओं के नीचे दबा हुआ था। उस पर अनेक स्मृतियों की धूल जम गई थी एवं वेद के बाद के सहस्रों वर्षों में हिन्दुओं ने जो रूढ़ियाँ और अन्ध-विश्वास अर्जित किए थे उनके ढूहों के नीचे यह धर्म दबा पड़ा था। राममोहन राय, रानाडे, केशवचन्द्र और तिलक से भिन्न स्वामी दयानन्द की विशेषता यह रही कि उन्होंने धीरे-धीरे पपड़ियाँ तोड़ने का काम न करके, उन्हें एक ही चोट से साफ कर देने का निश्चय किया। परिवर्तन जब धीरे-धीरे आता है, तब सुधार कहलाता है किन्तु वहीं जब तीव्र वेग से पहुँच जाता है, तब उसे क्रान्ति कहते हैं।

महाप्राण पण्डित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने लिखा है–"चरित्र, स्वास्थ्य, त्याग, ज्ञान और शिष्टता आदि में जो आदर्श महर्षि दयानन्द जी महाराज में प्राप्त होते हैं, उनका लेशमात्र भी अभारतीय पश्चिमी शिक्षा–संभूत नहीं, पुनः ऐसे आर्य में ज्ञान तथा कर्म का कितना प्रसार रह सकता है, वह स्वयं इसके उदाहरण हैं। मतलब यह है कि जो लोग कहते हैं कि वैदिक अथवा प्राचीन शिक्षा द्वारा मनुष्य उतना उन्नत–मना नहीं हो सकता, जितना अंग्रेज़ी शिक्षा द्वारा होता है, महर्षि दयानन्द सरस्वती इसका प्रत्यक्ष खण्डन करते हैं। महर्षि दयानन्द जी से बढ़कर भी मनुष्य होता है, इसका प्रमाण प्राप्त नहीं हो सकता। यहीं वैदिक ज्ञान की मनुष्य के उत्कर्ष में प्रत्यक्ष उपलब्धि होती है, यहीं आदर्श आर्य समाज में हमें देखने को मिलता है।........ आर्यसमाज की प्रतिष्ठा भारतीयों में एक नये जीवन की प्रतिष्ठा है, उसकी प्रगति एक दिव्य शक्ति की स्फूर्ति है। देश में महिलाओं, पतितों तथा जाति–पाँति के भेद–भाव मिटाने के लिए महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज से बढ़कर इस नवीन विचारों के युग में किसी भी समाज ने कार्य नहीं किया। आज जो जागरण भारत में दीख पड़ता है, उसका प्रायः सम्पूर्ण श्रेय आर्यसमाज को है। स्वधर्म में दीक्षित करने का यहाँ इसी समाज से श्रीगणेश हुआ है। किसी दूसरे प्रतिभाशाली पुरुष से और जो कुछ उपकार देश तथा जाति का हुआ हो, सबसे पहले वेदों को स्वामी दयानन्दजी सरस्वती ने ही हमारे सामने रखा। हम आर्य हों, हिन्दू हों, ब्राह्मसमाज वाले हों, यदि हमें ऋषियों की सन्तान होने का सौभाग्य प्राप्त है और इसके लिए हम गर्व करते हैं, तो कहना होगा कि ऋषि दयानन्द से बढ़कर हमारा उपकार इधर किसी भी दूसरे महापुरुष ने नहीं किया, जिन्होंने स्वयं कुछ भी न लेकर हमें अपार ज्ञान–राशि वेदों से परिचित कर दिया। **{द्र.–निराला रचनावली, भाग–6, पृ. 427–428 / निराला के तीन निबन्ध (1) 'महर्षि दयानन्द सरस्वती और युगान्तर (2) स्वामी दयानन्द और मत–मतान्तर (3) महर्षि दयानन्द और नारीसमाज' शीर्षक से 'सुधा' (अर्धमासिक) लखनऊ के 16 अक्टूबर 1933 के अंक से क्रमशः छपे थे। ये तीनों निबन्ध निराला के ग्रन्थ 'प्रबन्ध–प्रतिमा' में संकलित हैं}**

11. दलितोद्धार–भारतवर्ष के सामाजिक ढाँचे के मूल में हिन्दू समाज की वर्ण–व्यवस्था है जो जन्मपरक जाति–व्यवस्था के रूप में परिवर्तित हो गई है। हिन्दू समाज की इस जातिमूलक व्यवस्था में क्रान्तिकारी सुधार या परिवर्तन किये विना प्रगतिवादी, भेदभाव रहित समाज की स्थापना नहीं हो सकती। नवजागरण के अग्रदूत राजा राममोहन राय के साहित्य में जातिभेद पर उनका चिन्तन उतना प्रबल नहीं है जितना कि सतीप्रथा और स्त्रियों की दुरवस्था को लेकर व्यक्त हुआ है।

स्वामी दयानन्द दलितों की दयनीय अवस्था के मूल में प्रचलित जन्ममूलक

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

आर्यसमाज दिग्दर्शन

● भद्रसेन

गतांक से आगे...

तब इन्द्र ने उत्तर दिया कि जैसे वेद अध्ययन के लिए अनुपयुक्त उपाय रूप तप तुम कर रहे हो। वैसे ही मैंनें भी यह कार्य आरम्भ किया है।

अमार्ग एष विप्रर्षे येन त्वं यातुमिच्छसि।
किं विधातेन ते विप्र गच्छाधीहि गुरोर्मुखात्।।
।। 22।।

बालुकामुष्टिमनिशं भागीरथ्यां व्यसर्जयत्।
सेतुमभ्यारभच्छक्रो यवक्रीतं निदर्शयन्।।
।। 33।।

तै ददर्श यवक्रीस्त यत्नवन्तं निबन्धने।
प्रहसन् चाब्रवीद्वाक्यमिदं स मुनिपुङ्गवः।।
।। 34।।

किमिदं वर्तते ब्रह्मन् किं च ते ह चिकीर्षितम्।
अतीव हि महान् यत्नः क्रियतेऽयं निरर्थकः।।
।। 35।।

इन्द्र उवाच–

बन्धिष्ये सेतुना गंगा सुखः पन्था भविष्यति।
क्लिश्यते हि जनस्तात तरमाणः पुनः पुनः।।
।। 36।।

यवन्नायं शक्यस्त्वया बद्धुं महानोद्यस्तपोधन।
अशक्याद्विनिवर्तस्व शक्यमर्थं समारम।।
।। 37।।

इन्द्र यथैव भवता चेदं तपो वेदार्थमुद्यतम्।
अशक्यं तद्वदस्माभिरयं भारः समाहितः।।
।। 38।।

इस सारे का तात्पर्य यह है कि बिना पढ़े मन्त्र, तन्त्र आदि के जाप तथा जादू के किसी प्रकार से विद्या नही आती है। ऐसी ही चर्चा स्वतन्त्रता सेनानी, क्रान्तिकारी बाबा पृथिवी सिंह ने अपनी आत्मकथा में चित्रित की है। जिसमें दर्शाया है कि पुराणों की पति प्राप्ति वाली पार्वती की तपस्या की तरह मीरा बैन ने भी वनों में जाकर तपस्या की थी।

नवीन—श्रीमान् जी ! आर्यसमाज के सत्संग से तो ऐसा झलकता हैं, कि जैसे महर्षि दयानन्द ने अपनी खिचड़ी अलग ही पकाई है?

प्राध्यापक—ऐसी कोई बात नहीं हैं, क्योंकि आर्यसमाज के सत्संग में सर्वप्रथम यज्ञ होता हैं, जोकि वैदिक वाङ्मय के श्रौत–गृह्य सूत्रों जैसे यज्ञ साहित्य के अनुरूप ही होता है। वहाँ अधिकतर वेदों के ही मन्त्र प्रयुक्त होते हैं। वेद भारतीय साहित्य, धर्म, परम्परा के मूल आधार हैं तथा ईश्वरीय ज्ञान होने से इनमें सार्वभौमिक विचार हैं अतएव आर्यसमाज के विचारों का वेद ही मूल आधार है।

हाँ, यहाँ के सत्संग में केवल एक ईश्वर की ही पूजा, भक्ति, उपासना होती है जो कि वेद और हमारी भावना एवं कथनी के अनुकूल होती है।

आपके इस प्रश्न के सभी पहलुओं का उत्तर महर्षि के **'स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश'** में इन शब्दों द्वारा प्राप्त होता है।

'जो वेदादि सत्यशास्त्र और ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्तों के माने हुए ईश्वर आदि पदार्थ हैं, जिनको मैं भी मानता हूँ, सब सज्जन महाशयों के सामने प्रकाशित करता हूँ। मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूँ, जो तीन काल में सबको एक–सा मानने योग्य है।

मेरा कोई नवीन कल्पना व मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है किन्तु जो सत्य है, उसको मानना, मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है।' पृ. 585 (स्वामी वेदानन्द सम्पादित संस्करण)

विवेक — यदि महर्षि ने नई प्रथा नहीं चलाई, तो उनका योगदान इस क्षेत्र में क्या है ?

प्राध्यापक—महर्षि ने बारम्बार यही लिखा हैं कि हमारा धर्म वही है, जो वेद कहता है। अतएव महर्षि ने लिखा हैं—

(पूर्व.) तुम्हारा मत क्या हैं ? (उत्तर.) वेद अर्थात् जो–जो वेद में करने और छोड़ने की शिक्षा की है उस उसका हम यथावत् करना छोड़ना मानते हैं। जिस लिए वेद हम को मान्य है इसलिए हमारा मत वेद है। ऐसा ही हम मनुष्यों को विशेषतः आर्यो को एकमत्य होकर रहना चाहिए। (सत्यार्थ. 3,67)

हाँ, जहाँ तक महर्षि के योगदान की बात है, तो वस्तुतः महर्षि ने वैदिक साहित्य, धर्म के क्षेत्र को एक निश्चित दिशा और व्यवस्थित रूप दिया है अतः संशय, अनिश्चय, पारस्परिक विरोध की स्थिति में एक 'सुसंगत' जीवनपथ दर्शाकर महर्षि ने एक अपूर्व योगदान दिया है। श्री परमानन्द शर्मा के शब्दों में इसको ऐसे कह सकते हैं—

'जब लाल पर चेतनता के
चिह्न अनिश्चय का अंकित था,
दिखलाया निश्चय–पथ तुमने
शोषित कर शंका का सागर।'

अभिनव—मुझे तो यज्ञ की प्रक्रिया में भी अन्तर प्रतीत होता है।

प्राध्यापक—हाँ, ठीक कहा, आर्यसमाज केवल ईश्वर को ही जगत् का कर्त्ता–धर्ता मानता है। ये सूर्यादि प्राकृतिक पदार्थ उसी की ही व्यवस्था में बँधे हुए हैं। आर्यसमाज की दृष्टि से देवी–देवताओं की स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। अतः महर्षि के विचार से यज्ञों का देवताओं की प्रसन्नता से कोई सम्बंध नहीं हैं। हाँ, ये धूप, अगरबत्ती की तरह जल, वायु आदि की शुद्धि के लिए किए जाते हैं इसीलिए इनकी सामग्री उसके अनुरूप होती है। ***'एक पन्थ दो काज'*** के अनुसार यज्ञ के साथ ईश्वर के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना विषयक एवं यज्ञ सम्बद्ध मन्त्र भी पढ़े जाते हैं। अतएव महर्षि ने लिखा है—

(पूर्व.) होम से क्या उपकार होता है ? (उत्तर) सब लोग जानते हैं कि दुर्गन्धयुक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुःख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग के नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है।' (सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास 3, पृ. 43)

होमाग्नि द्वारा नीचे स्थित वायु का हलका होकर निकल जाना, शुद्ध वायु का प्रवेश, उसका होम द्रव्यों द्वारा सुगन्धित होकर आकाश में चढ़कर वृष्टि जल को शुद्ध कर देना। ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका वेद–विषय विचार।

'जिस मनुष्य के शरीर से जितना दुर्गन्ध उत्पन्न हो के वायु और जल को बिगाड़ कर रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियों को दुःख प्राप्त कराता है, उतना ही पाप उस मनुष्य को होता है इसलिए उस पाप के निवारणार्थ सुगन्ध व उससे अधिक वायु और जल में फैलाना चाहिए और खिलाने पिलाने से उसी एक व्यक्ति को सुख विशेष होता है जितना घृत और सुगन्धादि पदार्थ एक मनुष्य खाता है। उतने द्रव्य के होम से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है। परन्तु जो लोग घृतादि उत्तम पदार्थ न खावें तो उनके शरीर और आत्मा के बल की उन्नति न हो सके। इससे अच्छे पदार्थ खिलाना–पिलाना भी चाहिए।' (सत्यार्थप्रकाश 3,44)

(पूर्व.) तो मन्त्र पढ़ के होम करने का क्या प्रयोजन है ? (उत्तर.) मन्त्रों में वह व्याख्यान हैं कि जिससे होम करने के लाभ विदित हो जाएँ और मन्त्रों की आवृत्ति होने से कण्ठस्थ रहें, वेद पुस्तकों का पठन–पाठन और रक्षा भी होवे। 3,44

अमर—इन वाक्यों द्वारा आपने हमारे इस सम्बन्ध के कई प्रश्नों का पहले ही उत्तर दे दिया। हाँ, एक और विशेष जानने योग्य बात यह है कि जिस प्रकार दूसरे धर्मस्थानों पर किसी न किसी मूर्ति आदि की पूजा होती है, ऐसा यहाँ कुछ नहीं दिखता तथा मूर्ति के बिना यह मन्दिर कैसे ?

प्राध्यापक—इस सारी परम्परा को समझाने के लिए आइए ! पहले मूर्तिपूजा शब्द को समझें !

मूर्ति का अर्थ है—ठोस, निग्गर

मूर्तौ घनः पाणिनीय 3,3.77

मूर्तं सत्त्व भूतम्। निरुक्त 1.1

और यहाँ इसका अभिप्राय है, पत्थर या धातु की बनी हुई विशेष आकृति और पूजा का सीधा–सा अर्थ है आदर, सत्कार, किसी का सही उपयोग, वर्ताव करना।

निकष—यहाँ तो मूर्तिपूजा इकट्ठा शब्द है, अतः इसका कुछ विशेष अभिप्राय होगा ?

प्राध्यापक—इस प्रसंग, प्रकरण के अनुरूप मूर्तिपूजा का एक विशेष अभिप्राय है और वह है—उस विशेष आकृति वाली प्रतिष्ठित मूर्ति की धूप, दीप, पुष्प, पत्र, फलादि भोज्य पदार्थ प्रभृति पूजा सामग्री से मन्त्र उच्चारण पूर्वक पूजा, कीर्तन, आरती करना और उससे प्रार्थना करना तथा यही आजकल मूर्तिपूजा कहलाती है।

कृष्णलाल—ऐसी मूर्तिपूजा से आर्यसमाज को क्या मतभेद है?

प्राध्यापक—पहली बात तो यह है कि यह मूर्ति की पूजा है न कि ईश्वर की, क्योंकि इससे ईश्वर उपलब्धि नहीं हो सकती।

कृष्णलाल — वह कैसे ?

प्राध्यापक—ईश्वर को मानने वाले सारे के सारे आस्तिक ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हैं। ईश्वर जब सर्वव्यापक है, तो वह एकदेशी, साकार नहीं हो सकता, जैसे कि आकाश। अर्थात् प्रत्येक पदार्थ के कण–कण में व्याप्त परमात्मा जब निराकार है, तब उसकी

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

जिस मनुष्य के शरीर से जितना दुर्गन्ध उत्पन्न हो के वायु और जल को बिगाड़ कर रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियों को दुःख प्राप्त कराता है, उतना ही पाप उस मनुष्य को होता है इसलिए उस पाप के निवारणार्थ सुगन्ध व उससे अधिक वायु और जल में फैलाना चाहिए और खिलाने पिलाने से उसी एक व्यक्ति को सुख विशेष होता है जितना घृत और सुगन्धादि पदार्थ एक मनुष्य खाता है। उतने द्रव्य के होम से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है।

श्रीयुत पं. माखनलाल जी चतुर्वेदी

● आचार्य सत्यपाल नैष्ठिक

सी.पी. के होम मेम्बर से आज्ञा लेकर श्रीयुत काशीप्रसाद पांडे और साथ में श्रीयुत कुंजबिहारीलाल जी एम.एल.ए. 27 जुलाई को चतुर्वेदी जी से मिलने गये थे। श्रीयुत कुंजबिहारीलाल जी ने बिलासपुर से चतुर्वेदी जी सम्बन्धी कुछ बातें 'कर्मवीर' में भेजी थी, जो नीचे प्रकाशित की जाती हैं–

"कोठरी के दरवाजे पर पहुँचते ही हमें सच्चे देशभक्त और दृढ़ असहयोगी चतुर्वेदी जी कैदियों की पोशाक में खड़े–खड़े रस्सी भाजते दृष्टिगोचर हुए। इन्हें इस दशा में देख कर दुःख हुआ। शिष्टाचार के पश्चात् उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा कि आप ही के शुभागमन में आज दोपहर से सफाई की चहल–पहल जारी थी, मुझे आश्चर्य था कि आज किसका आगमन हो रहा है कि जिसके लिए कर्मचारी सफाई करने की दौड़ धूप कर रहे थे। सुपरिण्टेण्डेण्ट की ओर देखने पर उन्होंने कहा कि आप लोगों के आने की सूचना जेलर को दे दी गई थी परन्तु कमरे आदि की लिपाई सप्ताह में एक बार होती है। चतुर्वेदी जी ने कहा कि यह कमरा दोपहर के बाद ही लीपा गया है। सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने इस पर विश्वास नहीं किया। कहा कि यदि दोपहर को लीपा गया होता तो इतनी जल्दी सूखता? किन्तु हमें भी देखने से ऐसा ही मालूम हुआ कि दोपहर के बाद ही लीपा गया है। पांडे जी के पूछने पर उन्होंने कहा कि मुझे किसी प्रकार के कष्ट के लिए शिकायत नहीं करनी है। **यदि यह कहो कि कष्ट देने से विचारों में कुछ परिवर्तन होगा तो भूल है।** स्वास्थ्य में अवनति ही दिखाई दी। उस कोठरी में उन्हें दिन को कार्य करना पड़ता है। वे किसी से बात नहीं कर सकते और न अन्य कोई उनसे बात कर सकता है। दोपहर के दो घण्टे का समय खाने आदि के लिए मिलता है। रात्रि को उस कमरे में एक दूसरा कैदी रहता है। जो गर्मी या इसी किस्म की बीमारी का मरीज़ है। चतुर्वेदी जी ने यह भी कहा कि उसी कमरे में वह कैदी एक कोने में एक बर्तन में पेशाब करता है और वह सुबह उठा लिया जाता है तथा इसी कमरे में चतुर्वेदी जी को भोजन करना पड़ता है। हम लोगों ने सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल से इस पर आपत्ति की कि यह बहुत ही अनुचित है कि छोटी कोठरी में वह पेशाब करे और इसी कमरे में इन्हें भोजन करना पड़े। सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने कहा कि कोई ऐसा मरीज़ नहीं रहता, यदि कोई ऐसा होता तो अस्पताल में रखा जाता, यदि ऐसा हो कि जिसे ऐसा मर्ज़ कभी रहा हो और वह अच्छा हो गया हो तो वह उन्हें मालूम नहीं और पेशाब का बर्तन तो सवेरे ही उठा लिया जाता है और कोठरी झाड़ कर साफ की जाती है तो फिर क्या एतराज़ हो सकता है? हम लोगों को यह सुनकर ज़रा आश्चर्य हुआ। कदाचित् नीचे कैदियों की देख–रेख करते रहने के कारण उनके सभ्य विचारों में कुछ फर्क आ गया हो क्योंकि हमें जब याद आने पर ही ग्लानि होती है तो उन्हें (चतुर्वेदी जी को) क्यों न ग्लानि होती होगी? सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने कहा कि आप जहाँ खाना पकाते हैं, वहाँ क्यों नहीं भोजन करते? उत्तर मिला कि जेलर साहब की आज्ञा हुई थी कि यह नियमानुकूल नहीं था। सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने जेलर को आज्ञा दी कि भोजन अस्पताल में करने दिया करो। उस कोठरी में पत्थर की गिट्टी के ऊपर चूने की पिसाई और उसी पर मिट्टी की लिपाई हुई थी। तख्ती देखने से मालूम हुआ कि उन्हें पहले 6 छटाँक रस्सी बाँटनी पड़ती थी। चतुर्वेदी जी के कथनानुसार 8 घण्टे खड़े–खड़े काम करने से उनका स्वास्थ्य खराब हुआ और वजन कम होने लगा। सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल के अनुसार मलेरिया के कारण स्वास्थ्य खराब हुआ और उसके लिए वे अस्पताल में रखे गये थे। अब बिमारी से उठने के बाद उन्हें केवल 4 छटाँक रस्सी बाँटनी होती है। कमरे में ज़ोर से पानी आने पर सामने की ओर से बौछार भी आ जाती है और ऊपर के रोशनदान से आती होगी। 'कर्मवीर' में निकले हुए लेख के पहले वे जिस कोठरी में थे वहाँ से अब दूसरी कोठरी में रखे गये हैं। पहले वाली में अब पागल रहता है। रात्रि को मच्छरों के कारण उन्हें नींद नहीं आती। एक तो वैसे ही डिस्पेप्सिया के कारण नींद नहीं आती, दूसरे मच्छर, फिर क्या कहना है। मच्छरों से बचने के लिए यदि ओढ़ना चाहे तो कम्बल का ओढ़ना बिलासपुर की गर्मी में असह्य है। सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने चतुर्वेदी जी को उपरना या पतला कपड़ा ओढ़ने के लिए देने में असमर्थता प्रकट की। कान में दर्द के कारण एक दिन कार्य बन्द करने की आज्ञा मिली थी, फिर दूसरे ही दिन आज्ञा मिली कि काम यदि न करेंगे तो करेक्टर (चाल चलन) खराब लिखा जायेगा। इसलिए यद्यपि दर्द था तो भी काम कर रहे थे। कान पर पट्टी बँधी हुई थी।

यह भी मालूम हुआ कि उन्हें कोई समाचार पत्र या मासिक पत्र पढ़ने को नहीं दिये जाते। सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल ने पत्रादिक देने की आशा दिलाई है और अब सुना है दिये भी जाने लगे हैं। चतुर्वेदी जी का कथन था कि यदि कर्मवीर के पब्लिशर का डिक्लेरेशन उन्हीं के नाम से हो तो कर्मवीर की एक प्रति उनके पास भेजनी चाहिए।

"उन्होंने पांडे जी से अपने कष्ट निवारणार्थ प्रान्तीय सरकार से किसी प्रकार की भी याचना न करने का आग्रह किया है।"

'भारतीय देशभक्तों की कारावास और बलिदान की कहानी' से साभार

☞ पृष्ठ 05 का शेष

आत्मकथा

अवश्य करूँगा। कोई कानून नहीं जो मुझे ऐसा करने को बाध्य कर सके। इस पर उसे बहुत तंग किया गया और छोड़ दिया गया।

ऊपर की इस घटना से मुझे बड़ा दुःख हुआ और मैंने यह उचित समझा कि सैर करना मैं छोड़ सकता हूँ, पर स्वदेशवासी भाइयों का यह अपमान सहन नहीं कर सकता और ऐसा ही मैंने किया। किन्तु तब भी लोग पीछा नहीं छोड़ते थे। सड़क पर घूम–फिरकर प्रायः बहुत से इधर–उधर से झाँका करते तथा पुलिस वालों के देख लेने पर दुःख उठाते थे। इसी बीच में मुझ से बाहर न जाने का कारण सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस ने पूछा। मैंने कहा कि मैं रोज़–रोज़ अपने देश भाइयों का अपमान नहीं देख सकता। इस पर उसने कहा कि भविष्य में ऐसा नहीं होगा किन्तु खेद है वह बराबर होता ही रहा। कभी–कभी बहुत से कर्मचारियों के छोटे–छोटे मद्रासी लड़के श्रेणीबद्ध होकर खड़े हो जाते और बड़ी नम्रता से अभिवादन करते। मैं उनकी कमर ठोक देता और पैसे देकर विदा हो जाता।

इसी तरह से एक दिन प्रातःकाल चार बजे मैं बैठा कुछ सोच रहा था। मेरे कान में एक सिक्ख की आवाज आई वह 'जपजी साहब' का पाठ कर रहा था। पुलिस वालों ने समझा कि कुछ 'संदेश' मुझे पंजाबी भाषा में दे रहा है। यही समझ कर उसे पाठ करने से रोका गया। दूसरी घटना इससे भी विचित्र थी। एक दिन कुछ पंजाबी लड़के पशु चराते हुए पंजाबी गीत गा रहे थे। मेरे मन में आया कि मैं अपनी मातृभाषा में उनके गीत सुनूँ और यही समझकर उन अशिक्षित बालकों के पंजाबी गीत सुनने लगा। मेरे साथी पुलिस अफसरों ने उन लड़कों को बहुत दूर भगाया और भय दिखाकर भविष्य में उन्हें ऐसा 'घोर' अपराध करने से मना कर दिया गया।

ऐंग्लो इण्डियन समाचार पत्रों में मेरे सम्बन्ध में जो विष उगला जाता था, उससे सुपरिण्टेण्डेण्ट तथा अन्यान्य गोरे अफसर दिनों–दिन नाराज़ होते गये और यद्यपि वे लोग मुझे जान बूझकर किसी तरह का कष्ट न देते थे किन्तु भय भी उनके ऊपर बहुत बुरी तरह से सवार था। उसी गड़बड़ में कभी–कभी वे लोग ऐसे बन्धन तथा बाधाएँ उपस्थित कर देते थे, जिनसे मुझे कष्ट होता था।

बिल्ली के दो बच्चे कहीं से उस कमरे में आकर रहने लगे थे। कभी–कभी जब पढ़ने से जी ऊब उठता था तो मैं उनसे मन बहलाव करने लगता था। 11 नवम्बर को दोनों बच्चे कहीं इधर–उधर घूमने चले गये थे, किन्तु मेरे असबाब सहित मुझे स्टेशन पर पहुँचा दिया गया। मैं उनकी वापसी की प्रतीक्षा न कर सका, क्योंकि कमिश्नर ने कहा था कि स्पेशल ट्रेन तैयार खड़ी है। मुझे बिल्ली के बच्चों से मिलकर एक बार विदाई लेनी थी, परन्तु उधर भी शीघ्रता से ऐसा न कर सका। मेरे मुँह से सहसा निकल पड़ा–

"रिहाई की घड़ी आ गई। जंजीरें अलग–अलग करके फैंक दी गईं। मेरा समाज लोहे के किवाड़ और एकान्तवास तथा ईंटों की दीवारें थी, उन्हीं से मुझे प्रेम था। जब रिहाई देने वाले आये तो दुःख अनुभव हुआ। वे मुझ से दूसरा घर छुड़ाने आये हैं, मैंने कहा मकड़ी से मैत्री पैदा की थी। घड़ियों उसे ताना–बाना बुनते देखा करता। मैं चूहों को चाँदनी के साथ खेलते देखता और अपने आपको इन्हीं में से ख्याल करता। हम सब एक ही जगह रहते–सहते थे। मैं इनका बादशाह था। मैं चाहता तो इन्हें मार सकता था, परन्तु आश्चर्य था कि हम लोग शान्तिपूर्वक रहते थे, मुद्दत के रफीकों से अलग होते हुए सीने से एक बार आह निकल गई।"

'भारतीय देशभक्तों की कारावास और बलिदान की कहानी' से साभार

☞ पृष्ठ 06 का शेष

भारतीय नवजागरण...

वर्ण–व्यवस्था को चुनौती देते हैं–

"**प्रश्न**–क्या जिसके माता–पिता ब्राह्मण हों, वह ब्राह्मणी–ब्राह्मण होता है और जिसके माता–पिता अन्यवर्णस्थ हों, वह कभी ब्राह्मण हो सकता है? **उत्तर**–हाँ, बहुत से हो गए, होते हैं और होंगे भी। जैसे छान्दोग्य उपनिषद् में जाबाल ऋषि अज्ञातकुल, महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रिय वर्ण और मातंग ऋषि चाण्डाल कुल से ब्राह्मण हो गए थे। अब भी जो उत्तम विद्या स्वभाववाला है, वही ब्राह्मण के योग्य और मूर्ख शूद्र के योग्य होता है, और वैसा आगे भी होगा। **प्रश्न**–भला जो रज–वीर्य से शरीर हुआ है, वह बदलकर दूसरे वर्ण के योग्य कैसे हो सकता है? **उत्तर**–रज–वीर्य के योग से ब्राह्मण–शरीर नहीं होता।..... देखो! जिसका पिता श्रेष्ठ उसका पुत्र दुष्ट और जिसका पुत्र श्रेष्ठ उसका पिता दुष्ट तथा कहीं दोनों श्रेष्ठ अथवा दुष्ट देखने में आते हैं। इसलिए तुम लोग भ्रम में पड़े हो..... जो कोई रज–वीर्य के योग से वर्णाश्रम माने और गुणकर्मों के योग से ना माने, तो उससे पूंछना चाहिए कि जो कोई अपने वर्ण को छोड़ नीच, अन्त्यज अथवा कृश्चीन, मुसलमान हो गया हो, उसको ब्राह्मण क्यों नहीं गिनते? यहाँ यही कहोगे कि उसने ब्राह्मण के कर्म छोड़ दिये, इसलिए वह ब्राह्मण नहीं है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं, वे ही ब्राह्मणादि और जो नीच भी उत्तम वर्ण के गुण कर्म स्वभाववाला होवे, तो उसको भी उत्तम वर्ण में और जो उत्तम वर्णस्थ हो के नीच काम करे तो उसको नीच कर्म में गिनना अवश्य चाहिए। {**दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास, पृ० 71–73 (वैदिक पुस्तकालय, अजमेर, 41वाँ संस्करण, 2019 ई.)**}

स्वामीजी ने नीची जातियों के उत्थान–कार्य में बहुत दिलचस्पी ली इसके लिए दो तरीके अपनाये गए: (1) जिन जातियों को यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार नहीं था उन्हें यह अधिकार प्रदान किया गया और (2) अस्पृश्य जातियों के स्पृश्य जातियों के समकक्ष लाकर उन्हें उच्चतर सामाजिक आदर्शों की शिक्षा दी जाने लगी। जिसका उद्देश्य यह था कि अन्ततः वे अन्य हिन्दुओं के साथ बराबरी के स्तर पर आ सकें। इस कार्य के लिए होशियारपुर में "दयानन्द दलितोद्धार मण्डल" की स्थापना की गई। दयानन्द के विचारों को उनके एक महान् शिष्य, लाला लाजपत राय ने कार्यरूप में आगे बढ़ाया। लालाजी ने दलित वर्गों के प्रश्न पर तीन दृष्टियों से विचार किया (1) हिन्दू जाति के संदर्भ में (2) अखिल भारतीय महत्त्व के प्रश्न के रूप में और (3) उसके मानवीय पक्ष को लेकर। उन्होंने कहा–

"यह याद रखने की बात है कि राष्ट्रीय पतन के मूल में ये ही तत्त्व हैं। यदि हम राष्ट्रीय आत्म गौरव प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें दलित वर्गों के अपने अभागे भाई बहनों को बाहें फैला कर अपनाना होगा और उनके अन्दर मानव– गरिमा की भावना उत्पन्न करने में सहायक बनना होगा। जब तक हमारे देश में अछूत समझे जाने वाले लाखों लोग मौजूद हैं, तब तक हम अपने राष्ट्रीय मामलों में कोई वास्तविक प्रगति नहीं कर सकते। इस तरह की जाति के लिए उच्च स्तर की नैतिकता जरूरी है, और जिस समाज में कमजोर वर्गों के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार किया जाता हो, वहाँ ऐसी उच्च नैतिकता नहीं हो सकती। मानसिक दासता से बड़ी कोई दासता नहीं है और लोगों को गुलाम बनाए रखने से बड़ा और कोई पाप नहीं है। लोगों को गुलाम बनाना बुरी बात है, लेकिन ऐसी परिस्थितियाँ और दशाएँ उत्पन्न करना तो और भी बुरी बात है जिसमें फँस कर वे अपनी दासता के बन्धनों को तोड़ने का प्रयास भी नहीं कर सकते।"

उनका दृढ़ विश्वास था कि जब राष्ट्र का एक महत्त्वपूर्ण अंग ही सूख गया हो तब राष्ट्र सच्ची प्रगति नहीं कर सकता। अतः हिन्दू समाज के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह अछूतों को अपनाए और उनमें शिक्षा का प्रकाश फैलाए। उन्होंने कहा कि यदि दलित वर्गों को मनुष्यों की भांति जीने और उन्नति करने का अवसर दिया गया तो वे हिन्दू धर्म का त्याग नहीं करेंगे, किन्तु यदि मूढ़तावश हिन्दू समाज ऐसा करने में झिझकेगा तो वे ज्यादा दिन तक इस धर्म में नहीं रहेंगे। इस तरह हम देखते हैं कि दयानन्द ने और उनके अनुयायियों ने दलित बर्गों के लिए बहुत बड़ी सेवा का काम किया है। आर्यसमाज ने शुद्धि आंदोलन आरम्भ किया और नीची जाति के हिन्दओं को इस्लाम या ईसाई धर्म ग्रहण करने से रोक कर उनको हिन्दू धर्म में सम्मानपूर्ण दर्जा दिलाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। {**धनपति पाण्डेय–आधुनिक भारत के निर्माता : स्वामी दयानन्द सरस्वती (सप्तम अध्याय–सामाजिक पुनर्निर्माण), पृष्ठ 98–99, प्रकाशन विभाग–सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली–1 (अनुवादक– राजीव चतुर्वेदी), जुलाई–1992 ई०)**} **क्रमशः**

अध्यापक आवास, स्टेशन रोड,
अमेठी, (उत्तर–प्रदेश)–227405
मो. 7303474301

☞ पृष्ठ 07 का शेष

आर्यसमाज दिग्दर्शन

एकदेशी, सीमित मूर्ति=आकृति कैसे बन सकती है ? इसीलिए वेदों ने भी ईश्वर की मूर्ति, चित्र का निषेध किया है। {**न तस्य प्रतिमा अस्ति।** यजु. 32.3} अतः जब परमेश्वर की मूर्ति ही नहीं, तो फिर इस तरह उसकी पूजा कैसे हो सकती है? आजकल मन्दिरों में जितनी भी मूर्तियाँ मिलती हैं, वे सब विविध देवताओं–देवी अवतारों, महापुरुषों, गुरुओं की हैं। ये महापुरुष कभी शरीरधारी थे, इसीलिए इनकी मूर्ति बन सकती है और इसीलिए नए भी इसमें जुड़ते रहते हैं, जैसे कि–महात्मा गांधी आदि।

परमात्मा पूर्ण है, उसको किसी भी भौतिक पदार्थ की आवश्यकता नहीं है, जो इस प्रकार की पूजा पद्धति से दिया जा सके। हाँ, अनुपस्थित, अविद्यमान पदार्थ को भी भौतिक वस्तु नहीं दी जा सकती।

एक और विशेष बात यह है कि ईश्वर जहाँ सर्वव्यापक है, वहाँ वह सर्वज्ञ, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान आदि गुण–युक्त भी है। ये सारे गुण किसी मूर्ति में चरितार्थ नहीं हो सकते।

आनन्दप्रकाश–क्या इस पद्धति से या मूर्ति द्वारा ईश्वर का ध्यान नहीं किया जा सकता ?

प्राध्यापक–योग के सभी शास्त्रों में मूर्ति द्वारा ध्यान का कहीं भी विधान नहीं है और योग, ध्यान के समय आँखे बन्द कर ली जाती हैं; फिर उसके लिए मूर्ति की अपेक्षा ही नहीं रहती। आज की प्रचलित मूर्तिपूजा में भी उस माध्यम से कोई ध्यान करता हुआ प्राप्त भी नहीं होता। भक्त वहाँ आते हैं और मत्था टेक कर आगे चले जाते हैं।

उत्कर्ष–हाँ, इस ढंग की पूजा में क्या कोई दोष है ?

प्राध्यापक–प्रचलित मूर्तिपूजा = देवदर्शन, स्मरण, जाप, कीर्तन, प्रसाद अर्पण और मन्नत मानने आदि से हर कार्य की सिद्धि, इच्छा की पूर्ति समझी जाती है जबकि व्यवहार में ऐसा कहीं स्पष्ट प्राप्त नहीं होता। ऐसा विश्वास करके अनेक फल, इच्छा वस्तु प्राप्ति के उस–उस यथार्थ उपाय को छोड़ बैठते हैं, इस तरह भुलावे में आ जाते हैं और उन–उन उपायों को नहीं अपनाते।

श्रद्धावश भक्तजन खूब चढ़ावे चढ़ाते हैं, इससे धर्म–स्थल खूब समृद्ध हो जाते हैं। प्रायः इस समृद्धि के कारण वहाँ के अधिकारी आलसी, विलासी बन जाते हैं। बिना परिश्रम या थोड़ी मेहनत से खूब मिल जाने के कारण पुरोहित, पुजारी, काजी, पादरी आदि अपनी शिक्षा, विचार–शक्ति बढ़ाने का प्रयास नहीं करते। कुछ धर्मस्थलों के पूजक पूर्णतः अशिक्षित होते हैं, जो कि प्रायः नशों में भी मस्त रहते हैं। अतएव विलासिता की घटित घटनायें प्रायः सामने आती रहती हैं।

जनता की श्रद्धा भावना से एकत्रित धन के जहाँ कुछ ठेकेदार बन जाते हैं, वहाँ कुछ चोरी, लूट का रास्ता बना लेते हैं। हमारा इतिहास इस प्रकार की घटनाओं से भरा पड़ा है। प्राणप्रतिष्ठित को सर्वसमर्थ मानकर उसकी रक्षा, संभाल के पूरे उपाय न किए गए, जिससे लूट और अपमान के अवसर सामने आते रहे।

हाँ, धर्मस्थानों पर सत्संगों के द्वारा अच्छी राह बताने, ज़रूरतमन्दों की सेवा, शिक्षणालय, गोशाला, औषधालय आदि के आयोजन होने चाहिएँ जिससे समाज का अधिक से अधिक भला किया जा सके/लाभ उठाया जा सके।

उद्गम–फिर ईश्वर की पूजा, स्मरण ध्यान कैसे हो?

प्राध्यापक–परमात्मा जहाँ प्रत्येक पदार्थ में समाया हुआ है, वहाँ वह प्राणी अर्थात् हर प्राणी के हृदय में भी अन्तर्यामी रूप में उपस्थित है। ऐसे सब जगह विराजमान प्रभु को और उसके गुणों को, नियमों को आदर देना, पालना ही ईश्वर की पूजा की पहचान हैं। प्रत्येक पदार्थ के कण–कण में समाये ईश्वर को चलते–बैठते, जागते–कार्य करते हुए याद करना, स्मरण रखना उसकी आज्ञा, नियमों को मानना भी ईश्वर की भक्ति है। ईशभक्ति का मुख्यभाव यही है, कि भक्त का भगवान से जुड़ना, उसको स्मरण करना।

हाँ, ईश्वर के गुणों को बताने वाले शब्द के माध्यम से, या ऐसे मन्त्र, श्लोक, दोहे, भजन के जाप से ईश्वर से अपने आपको जोड़ना भी पूजा, भक्ति, ध्यान है।

हाँ, आज की चर्चा को अब यहीं विराम देते हैं।

क्रमशः

182 शालीमार नगर,
होशियारपुर 146001

पत्र/कविता

महाराणा प्रताप

महाराणा उदयसिंह के पुत्र प्रताप का जन्म 1540 ई. में हुआ था। उदयपुर के मीरा कन्या महाविद्यालय के प्रोफेसर और इतिहासकार डॉ. चन्द्रशेखर शर्मा ने वर्ष 2007 में महाराणा प्रताप पर शोध प्रस्तुत किया था। उन्होंने बताया कि हल्दीघाटी का युद्ध अकबर ने नहीं बल्कि महाराणा प्रताप ने जीता था। इसके लिए डॉ. शर्मा ने बाकायदा हल्दीघाटी युद्ध से जुड़े जमीन के पटे, ताम्रपत्र और विदेशी इतिहासकारों द्वारा लिखी गई किताब को साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया था।

डॉ. शर्मा ने महाराणा प्रताप पर अपनी पहली किताब 'राष्ट्र रत्न' लिखी। इसमें उन्होंने हल्दीघाटी युद्ध से जुड़े पहलुओं को बड़ी बारीकी से जनता के बीच रखा। इसके बाद देश दुनिया के कई इतिहासकारों ने भी शर्मा की बात को स्वीकारा।

महाराणा प्रताप पर हुई रिसर्च में किए गए दावों के बाद प्रदेश भर में शर्मा का अभियान मूर्त रूप लेने लगा। आम से खास सभी महाराणा प्रताप और हल्दीघाटी युद्ध को लेकर इतिहास में बदलाव की माँग करने लगे। सरकार ने राजस्थान विश्वविद्यालय की एकेडमिक काउन्सिल की बैठक में शर्मा के दावों को जाँचा।

रिपोर्ट, टीम मंत्रियों की कमेटी ने तत्कालीन मुख्यमंत्री वसुन्धरा राजे को सौंपी। इसके बाद में तत्कालीन भाजपा सरकार ने न सिर्फ स्कूलों की बल्कि कॉलेज के पाठ्यक्रम में भी बदलाव कर हल्दीघाटी युद्ध में महाराणा प्रताप की जीत अंकित की। इसके बाद न सिर्फ देश बल्कि दुनियाभर में हल्दीघाटी युद्ध में अकबर ही नहीं बल्कि महाराणा प्रताप की जीत दर्शायी गई है। इतिहासकार डॉ. चन्द्रशेखर के अनुसार देश दुनिया ने अब महाराणा प्रताप को हल्दीघाटी युद्ध में जीता हुआ मान लिया है, बावजूद इसके हल्दीघाटी के समीप बनी रक्ततलाई जहाँ महाराणा प्रताप और अकबर की सेना के बीच युद्ध हुआ था, वहाँ लगे शिलापट पर अकबर को युद्ध में विजयी और महाराणा प्रताप को भगोड़ा बताया गया है। राजसमन्द की विधायक दीपा माहेश्वरी के अनुरोध पर संस्कृति मन्त्री प्रल्हाद पटेल ने रक्त तलाई के उक्त सूचनापट्ट को सही कर दिया।

स्वामी गुरुकुलानन्द 'कच्चारहारी'
पिथौरागढ़ (उत्तराखण्ड)
'इतिहास के बिखरे पन्ने' से साभार

****

पावन पर्व-मकरसंक्रांति का महत्त्व

आर्यों का यह मकर–संक्रान्ति पावन पर्व है।
पर्वों का यह तो मूल है हम सबको इस पर गर्व है।।
रामा–कृष्ण ऋषिवृन्द ने, इस पर्व को माना सदा।
पाला सनातन धर्म को, था सत्य को जाना सदा।।
इस दिन घरों में, यज्ञ पावन, आर्यजन करते थे सब।
वैदिक कथा से मानसिक पीड़ा सफल हरते थे सब।।
ज्ञान की गंगा विमल बहती थी प्रजा थी सुखी।
स्वर्ग का वातावरण था, कोई भी ना था दुखी।।
शासक थे सब धर्मात्मा, जनता का रखते ध्यान थे।
वीर, व्रतधारी, सदाचारी, महा बलवान थे।।
विश्व हित की योजना, इस दिन बनाते थे सुनो।
न्यायकारी थे, प्रजा का, दुख मिटाते थे सुनो।।
हम गुरु थे विश्व के इसका सुखद परिणाम था।
आर्यजन सब देवता थे, हर तरफ आराम था।।
चोर, डाकू, जार, मद्यप, इस जगत् में थे नहीं।
व्यभिचारिणी नारियाँ, इस देश में ना थीं कहीं।।
यदि महत्व इस त्योहार का, संसार सारा जान ले।
गौतम कपिल कणादि की, यदि सीख दुनियाँ मान ले।।
सद्भावना जागे दिलों में, विश्व के कल्याण की।
सब ईश विश्वासी बनें, बातें लाजें अभियान की।।
वेद के अनुकूल जीवन, ये हमारा हो प्रभो!
सबके जीवन का सहारा, तू ही प्यारा हो प्रभो !!
विश्वास है जगत् के, दूर होंगे दुख सभी।
दीन, दुखिया ना रहेंगे, प्राप्त होंगे सुख सभी।।
हे ईश ! तुम वरदान दो, हम कर्म नेकी के करें।
मानव सभी मानव बने, संसार की पीड़ा हरें।।
आर्यों ! जागो सभी तुम, त्याग दो प्रमाद तुम।
प्यारे गुरु दयानन्द की, शिक्षाएँ कर लो याद तुम।।
वेद का प्रचार कर, सारे जगत् को दो जगा।
विश्वपति परमात्मा से, प्यार वीरो ! लो लगा।।
कर्मवीर बनकर करो, वीरो ! धर्म के काम तुम।
'नन्दलाल' संसार में, ऊँचा करो, निजी नाम तुम।।

पं. नन्दलाल निर्भय
आर्य सदन बहीन जनपद पलवल (हरि.)
मो. 9813845774

चीकू

चीकू (Chikoo) एक मीठा, पौष्टिक फल है जिसे अंग्रेज़ी में Sapodilla या Sapota कहते हैं, जो अपनी मीठी, दानेदार बनावट और हल्के भूरे रंग के छिलके के लिए जाना जाता है, और यह विटामिन, फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है, जो पाचन, रोग प्रतिरोधक क्षमता और समग्र स्वास्थ्य में सुधार करता है और इसे सीधे या मिल्कशेक के रूप में खाया जाता है।

स्वास्थ्य लाभ

पोषक तत्वों से भरपूर (Rich in Nutrients): विटामिन (A, B), फाइबर, एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर।

पाचन (Digestion): पाचन में सुधार करता है, कब्ज से राहत देता है।

ऊर्जा (Energy): तुरंत ऊर्जा प्रदान करता है, डिहाइड्रेशन दूर करता है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता (Immunity): प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है।

तनाव कम (Stress Relief): मस्तिष्क को शांत करता है और तनाव कम करता है।

गर्भावस्था (Pregnancy): गर्भवती महिलाओं के लिए फायदेमंद, मतली और उल्टी से राहत देता है।

कैसे खाएं (How to Eat):

सीधा फल (Directly): छीलकर खाया जा सकता है।

मिल्कशेक (Milkshake): मिल्कशेक और स्मूदी में उपयोग होता है।

मिठाई (Desserts): मिठाइयों में भी इस्तेमाल किया जाता है।

चीकू एक स्वादिष्ट और पौष्टिक फल है जो कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है और इसे आसानी से अपनी डाइट में शामिल किया जा सकता है।

चीकू कब नहीं खाना चाहिए ?

आपको चीकू तब नहीं खाना चाहिए जब आपको डायबिटीज हो (क्योंकि यह शुगर बढ़ाता है), पाचन संबंधी समस्या हो (पेट फूलना, गैस), या एलर्जी हो (त्वचा पर रैशेज़)। देर रात सोने से पहले और बहुत ज़्यादा मात्रा में भी चीकू से बचें, क्योंकि इसमें मौजूद शुगर और फाइबर नींद और पाचन को प्रभावित कर सकते हैं, और ज़्यादा खाने से वजन बढ़ सकता है।

एक दिन में कितने चीकू खाने चाहिए ?

मात्रा का ध्यान रखें: अधिक कैलोरी सेवन से बचने के लिए प्रतिदिन 1–2 छोटे चीकू से अधिक का सेवन न करें। सही संयोजन: चीकू की चीनी की मात्रा को संतुलित करने के लिए इसे प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों जैसे मेवे या दही के साथ मिलाकर खाएं। रात में सेवन से बचें: शाम को देर से चीकू खाने से शरीर की चयापचय गति धीमी हो जाती है, जिससे शुगर लेवल बढ़ सकता है।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

डी.ए.वी. दुर्गापुर की स्वर्ण जयंती पर ...

और ऋतभुक् ईमानदारी की कमाई से खाने की व्याख्या की।

श्रीमती पापिया मुखर्जी ने डॉ. पूनम सूरी का तथा उपस्थित जन समूह का स्वागत किया।

उन्होंने बताया 1975 में तीन कक्षाओं, तीन शिक्षकों और तीस विद्यार्थियों को लेकर आरम्भ हुआ। डी.ए.वी. मॉडल स्कूल आज छह हज़ार विद्यार्थियों और लगभग ढाई सौ अध्यापिका–अध्यापकगण सहित राज्य का एक विशाल शिक्षा केन्द्र बन गया है। श्रीमती मनी सूरी एवं डॉ. निशा पेशिन ने अपनी गरिमामयी उपस्थिति से कार्य की शोभा बढ़ाई।

कार्यक्रम का दूसरा चरण डी.ए.वी. मॉडल स्कूल दुर्गापुर के परिसर में सम्पन्न हुआ।

पश्चिमी बंगाल की धरोहर पर आधारित एक भव्य प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के बाद ध्वजारोहण किया गया।

भव्य रूप से सजाए यज्ञ मण्डल में 201 कुंडीय महायज्ञ का आयोजन किया गया। मुख्य हवनकुण्ड में मुख्य यजमान पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी जी एवं मणिसूरी जी के साथ श्रीमती निशा पेशिन, श्री एस.के. पाल, सपरिवार, और क्षेत्रीय अधिकारी पापिया मुखर्जी ने यज्ञ में आहुतियाँ प्रदान कीं। तीन कुण्डों पर प्रक्षेत्र के प्राचार्य एवं डी.ए.वी. बिहार से आए श्री एस.के. झा, श्रीमान रामाशिष राय और सुश्री अंजली ने आहुति प्रदान की। शेष कुण्डों पर पश्चिम बंगाल के शिक्षकगण आहुतियाँ दे रहे थे।

आदरणीय प्रधान जी ने विद्यालय की स्थापना के पचास वर्ष पूरे होने पर विद्यालय में महात्मा आनंद स्वामी ब्लॉक के भवन का शिलान्यास किया। सभी ने यह भवन दो वर्षों में निर्मित करने का संकल्प लिया।

सायंकालीन 'स्वर्णिका' के अंतर्गत डीएवी के विद्यार्थियों ने भव्य रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत कर उपस्थित दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। इस अवसर पर डॉ. पूनम सूरी ने अपने सम्बोधन में 'हमेशा मुस्कुराते हुए कार्य करके, बडा सोचने और परिश्रम से युक्त कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने इस का भव्य आयोजन करने के लिए विद्यालय के प्राचार्य, शिक्षकवृन्द और शिक्षेत्तर कर्मचारियों की प्रशंसा की। अंत में राष्ट्रगान करके स्वर्ण जयंती समारोह समापन हुआ।

डी.ए.वी. बी.आर.एस. नगर, लुधियाना में मकर संक्रान्ति

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, बी. आर. एस. नगर, लुधियाना के प्रांगण में 'मकर संक्रांति के अवसर पर हवन का आयोजन किया गया। यज्ञ में ऋतु अनुकूल सामग्री का प्रयोग किया गया जिससे वातावरण पवित्र और सुगन्धित हो गया। यज्ञ ब्रह्मा ने मकर संक्रान्ति पर अपने उद्बोधन में बताया कि यह सूर्य का धनु से मकर राशि में संक्रांति (प्रवेश) है, जिससे दक्षिणायन समाप्त होकर उत्तरायण आरंभ होता है। उत्तरायण को देवयान मार्ग माना जाता है।

जैसे मकर राशि में सूर्य का तेज बढ़ता है, वैसे ही आपके तेज, स्वास्थ्य, समृद्धि, प्रताप की वृद्धि हो।

इस अवसर पर विद्यालय की प्राचार्या ने स्वच्छता अपनाने का आह्वान देते हुए कहा कि स्वच्छता ही जीवन की प्रथम सीढ़ी है। शारीरिक और मानसिक स्वच्छता से ही हम सच्ची समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। घर, स्कूल और आसपास को साफ रखें, कचरा इधर–उधर न फैलाएं तथा प्लास्टिक का त्याग करें, ताकि हमारी धरती हमेशा हरी–भरी रहे। स्वच्छ भारत अभियान को अपनाकर हम मकर संक्रांति की सकारात्मक ऊर्जा को वर्ष भर बनाए रखें।

बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन में अमृतसर में सेमिनार

बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर के कंप्यूटर साइंस एंड एप्लीकेशंस के पी जी डिपार्टमेंट ने "लीन स्टार्ट–अप और मिनिमम वायबल सास (सॉफ्टवेयर एज़ ए सर्विस) प्रोडक्ट और ए आई इनोवेशन" पर ज्ञानवर्धक सेमिनार आयोजित किया। इस मौके पर श्री आर्या कपूर, डिजिटल मार्केटिंग एग्जीक्यूटिव, सुश्री नानकी वालिया, हेड ऑफ लर्निंग एंड डेवलपमेंट, और श्री प्रभजीत सिंह कालरा,ए ओ एस सी टेक्नोलॉजीज के चीफ मार्केटिंग ऑफिसर, मुख्य वक्ता रहे।

श्री आर्या कपूर ने स्टार्ट–अप की सफलता में डिजिटल मार्केटिंग की भूमिका के बारे में उपयोगी जानकारी दी। सुश्री नानकी वालिया ने स्टार्ट–अप इकोसिस्टम में सॉफ्ट स्किल्स के महत्व और टेक्निकल और इंटरपर्सनल क्षमताओं के बीच संतुलन पर ज़ोर दिया।

प्रिंसिपल डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने कहा कि ऐसे कार्यक्रम अकादमिक शिक्षा और इंडस्ट्री की उम्मीदों के बीच की खाई को पाटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

पी जी डिपार्टमेंट ऑफ कंप्यूटर साइंस एंड एप्लीकेशंस की हेड प्रो. रजनी मेहरा, फैकल्टी मेंबर्स प्रो मनोज पुरी, प्रो अनुराग गुप्ता, डॉ. जसप्रीत बेदी, डॉ. सुशील शर्मा, सुश्री राधिका और सुश्री संदीप कौर के साथ सेमिनार में उपस्थित रहीं।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2025

हिन्दी पुत्री पाठशाला खन्ना में मकर संक्रांति पर हुआ यज्ञ

हिन्दी पुत्री पाठशाला (सी: सै:) खन्ना में मकर संक्रांति और नव वर्ष के अवसर पर हवन यज्ञ का आयोजन किया गया। आर्य समाज की परंपराओं का पालन करते हुए विद्यालय परिवार ने वर्ष की शुरुआत भी आध्यात्मिक ऊर्जा और सकारात्मकता के साथ की।

कार्यक्रम की शुरुआत गायत्री मंत्र के उच्चारण से हुई स इस अवसर पर विद्यालय के शिक्षक–वर्ग, कर्मचारी तथा छात्र–छात्राएं उपस्थित रहे। श्रीमती शशि बाला ने पुरोहित पद को तथा श्री गुरविंदर सिंह जी ने यजमान पद को सुशोभित किया। उपस्थित सभी लोगों ने 'ओम स्वाहा' के उद्घोष के साथ आहुतियाँ डालीं।

श्रीमती रजनी वर्मा जी ने सभी को मकर संक्रांति और नव वर्ष की बधाई देते हुए विश्व शांति, पर्यावरण की शुद्धि तथा विद्यार्थियों के उज्जवल भविष्य के लिए कामना की। उन्होंने कहा कि डी.ए.वी. संस्कृति हमें अपनी जड़ों से जुड़ना सिखाती है। हवन केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं बल्कि मन और वातावरण की शुद्धि का वैज्ञानिक तरीका है।

कार्यक्रम के अंत में सभी को प्रसाद वितरित किया गया। विद्यार्थियों ने इस आयोजन में बड़े उत्साह के साथ भाग लिया और अपनी संस्कृति के प्रति सम्मान व्यक्त किया।

शांति पाठ के साथ पवित्र आयोजन का समापन हुआ।

एलआरएस डी.ए.वी. अबोहर में गणित दिवस

एलआरएस डी.ए.वी. मॉडल स्कूल अबोहर में महान गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन की जयंती के अवसर पर राष्ट्रीय गणित दिवस अत्यंत उत्साह के साथ मनाया गया। आयोजन का उद्देश्य सभी कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए गणित को रोचक, अर्थपूर्ण बनाने के साथ–साथ जीवन से जोड़ना था।

प्री प्राइमरी विभाग में मानसिक गणना और त्वरित सोच को प्रोत्साहित करने वाली संवादात्मक गतिविधि के साथ संख्याएँ, घड़ी, आकृतियाँ और भार पर अभिनय हुआ। विद्यार्थियों ने गणितीय अवधारणाओं का नाट्य रूपांतरण भी किया, जिससे सीखना जीवंत और अर्थपूर्ण बन गया। माध्यमिक विभाग के बच्चों ने भी अपूर्व प्रदर्शन करते हुए,शुगर बोर्ड, साँप–सीढ़ी निर्माण, क्ले मॉडलिंग स्पर्शनीय और दृश्य मॉडलों के माध्यम से गणितीय विचारों की खोज की।

आयोजन का प्रमुख आकर्षण गणितीय गीत रहा। गीत में यह दर्शाया गया कि गणित सृजनात्मकता और कलात्मक अभिव्यक्ति का भी माध्यम हो सकता है। विद्यार्थियों ने न केवल संगीत का आनंद लिया, बल्कि गणितीय अवधारणाओं को भी आनंददायक ढंग से समझा।

प्राचार्या महोदया ने गणित दिवस की बधाई दी और उसके सफल आयोजन पर गणित विभाग की सराहना करते हुए कामना की कि भविष्य में भी इस प्रकार गणित को कला के सामायोजन के साथ प्रस्तुत किया जाता रहेगा।

डी.ए.वी. जयपुर में त्रिदिवसीय 'क्षमता संवर्धन कार्यशाला'

डी.ए.वी. जयपुर में शैक्षणिक सत्र 2025–26 के शैक्षणिक गुणवत्ता संवर्धन हेतु तीन दिवसीय 'क्षमता संवर्धन कार्यक्रम' के द्वितीय चरण का आयोजन किया गया।

इस प्रशिक्षण का उद्देश्य वर्तमान सत्र को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों के कौशल विकास व क्षमता संवर्धन को बल देना रहा। इस कार्यशाला में जोन–C के कुल 7 विद्यालयों से 70 प्रतिभागियों ने भाग लिया।

इस कार्यशाला का शुभारम्भ प्राचार्य श्रीमान अशोक कुमार शर्मा ने सभी प्रशिक्षकों के साथ परंपरागत विधि से गायत्री मंत्र के उच्चारण एवं दीप प्रज्वलन द्वारा किया।

कार्यशाला पूर्णतः ऑफलाइन मोड में आयोजित की गई, जिसमें अंग्रेज़ी, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान व गणितविषयों के अध्यापकों को विषय–विशेषज्ञों ने प्रशिक्षण प्रदान किया। इस वर्ष विशेष रूप से आवश्यक नवीनतम तकनीकी कौशलों का प्रशिक्षण दिया गया।

शिक्षा के क्षेत्र में नवीनतम तकनीकी प्रयोगों पर प्रकाश डाला गया तथा शिक्षण कौशल, कक्षा–अनुशासन, छात्र–रुचि संवर्धन, प्रश्न–पत्र प्रारूप, प्रश्न–पत्र निर्माण कौशल, अंकपत्रिका निर्माण आदि विषयों पर विस्तृत प्रशिक्षण दिया गया।

समापन समारोह के अवसर पर सभी प्रतिभागियों ने अपने–अपने सकारात्मक अनुभव साझा किए व इस प्रकार की कार्यशाला के आयोजन हेतु डी.ए.वी. प्रबन्धन का आभार व्यक्त किया। अन्त में सभी प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र प्रदान कर ग्रुप फोटो व शान्तिपाठ के साथ कार्यशाला का समापन हुआ।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**